पी. एण्ड एस. बैंक

राजभाषा अंकुर

दिसंबर 2025

वीर बाल दिवस

विशेषांक

पंजाब एण्ड सिंध बैंक
Punjab & Sind Bank
ਪੰਜਾਬ ਐਂਡ ਸਿੰਧ ਬੈਂਕ
राजभाषा विभाग

सतर्कता जागरूकता सप्ताह 2025

नैतिकता और पारदर्शिता की आवश्यकता के विषय में जागरूकता व संवेदनशीलता पैदा करने के लिए बैंक में 27 अक्तूबर, 2025 से 02 नवंबर, 2025 तक सतर्कता जागरूकता सप्ताह-2025 का आयोजन किया गया। मूल कथ्य ***"सतर्कता: हमारी साझा जिम्मेदारी"*** *सप्ताह के अंतर्गत बैंक में विभिन्न गतिविधियां आयोजित की गई। इसी क्रम में प्रधान कार्यालय में एक विशेष कार्यशाला का भी आयोजन किया गया जिसमें वित्तीय सेवाएं विभाग के उप सचिव (सतर्कता) श्री तपन कुमार मौंडल को आमंत्रित किया गया था। कार्यक्रम में बैंक के प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी श्री स्वरूप कुमार साहा, मुख्य सतर्कता अधिकारी श्री हेमंत वर्मा तथा कार्यपालक निदेशक श्री राजीवा भी उपस्थित रहे।*

पंजाब एण्ड सिंध बैंक

प्रधान कार्यालय राजभाषा विभाग की हिंदी पत्रिका

राजभाषा अंकुर

(केवल आंतरिक वितरण हेतु)

बैंक हाउस, प्रथम तल, 21, राजेन्द्र प्लेस, नई दिल्ली – 110008

दिसंबर 2025

मुख्य संरक्षक

श्री स्वरूप कुमार साहा
प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी

संरक्षक

श्री रवि मेहरा
कार्यपालक निदेशक

श्री राजीवा
कार्यपालक निदेशक

मुख्य संपादक

श्री गजराज देवी सिंह ठाकुर
महाप्रबंधक सह मुख्य राजभाषा अधिकारी

संपादक व प्रकाशक

श्री निखिल शर्मा
मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)

संपादक समिति

श्री देवेन्द्र कुमार, वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)
श्री बिभाष कुमार, वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)
श्रीमती भारती, प्रबंधक (राजभाषा)

ई-मेल : ho.rajbhasha@psb.bank.in
पंजीकरण संख्या : एफ.2 (25) प्रैस.91

'राजभाषा अंकुर' में प्रकाशित सामग्री में दिए गए विचार, संबंधित लेखकों के अपने हैं। पंजाब एण्ड सिंध बैंक का प्रकाशित विचारों से सहमत होना जरूरी नहीं है। सामग्री की मौलिकता एवं कॉपीराइट अधिकारों के प्रति भी लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं।

मुद्रक : जैना ऑफसेट प्रिंटर्स
ए 33/2, साइट-4, साहिबाबाद इंडस्ट्रीयल एरिया
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश
मोबाइल - 98112-69844

विषय सूची

क्र. सं.	विवरण	पृष्ठ सं.
1.	संपादक मंडल/विषय-सूची	1
2.	आपकी कलम से	2
3.	संपादकीय	3
4.	बाल मनोविज्ञान	4-7
5.	हिंदी कार्यशाला	8-9
6.	हाशिए की आवाज़	10-12
7.	संदेश – अपने बैंक के नाम	13
8.	सतर्क बालमन – सुरक्षित भविष्य	14-17
9.	किसान दिवस	18-19
10.	प्रेमचंद की बाल कहानियां	20-21
11.	संसदीय राजभाषा समिति का कोलकाता दौरा	22-23
12.	बाजारवाद और हम	24-27
13.	काव्य-मंजूषा	28-29
14.	दिल्ली बैंक नराकास पुरस्कार	30-31
15.	बेटा, डर मत! ये बैंक वाले अंकल है।	32-33
16.	कलाकार-कहानी	34-37
17.	राजभाषा उपलब्धियां	38-39
18.	बैंक परिसर में अग्नि रोकथाम	40-41
19.	भारतीय अर्थव्यवस्था पर भाषाओं का प्रभाव	42-44

आपकी कलम से

पंजाब एण्ड सिंध बैंक द्वारा प्रकाशित 'राजभाषा अंकुर' पत्रिका सितंबर, 2025 सुसंपादित, विषय-वस्तु की दृष्टि से समृद्ध एवं उच्च स्तरीय प्रस्तुति के साथ प्राप्त हुई। पत्रिका में सम्मिलित समसामयिक आर्थिक, बैंकिंग, सतर्कता, ग्राहक सेवा तथा राजभाषा संबंधी विषय बैंक की पेशेवर दक्षता, पारदर्शिता एवं उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य-संस्कृति को प्रभावी रूप से प्रतिष्ठित करते हैं। काव्य-मंजूषा की रचनाएं भावनात्मक गहराई के साथ पत्रिका को कलात्मक गरिमा प्रदान करती हैं।

विभिन्न आंचलिक कार्यालयों में आयोजित हिंदी कार्यशालाओं, हिंदी पखवाड़े, संसदीय राजभाषा समिति के दौरों, नराकास पुरस्कार से संबंधित चित्रात्मक प्रस्तुति बैंक में राजभाषा हिंदी के नियोजित एवं सतत कार्यान्वयन को सुदृढ़ रूप से दर्शाती है। समग्रतः 'राजभाषा अंकुर' पत्रिका राजभाषा हिंदी के प्रभावी प्रयोग एवं संस्थागत मूल्यों के संवर्धन की दिशा में एक सराहनीय प्रकाशन है।

- नितेश कुमार सिन्हा
महाप्रबंधक, इंडियन ओवरसीज़ बैंक, केंद्रीय कार्यालय, चेन्नई

हाल ही में मुझे पंजाब एण्ड सिंध बैंक की पत्रिका "अंकुर" पढ़ने का अवसर मिला। पत्रिका, बैंक की गतिविधियों, पहलों और उपलब्धियों की जानकारी देने के साथ-साथ भाषा, विचार और संवेदना के लिए भी स्थान बनाती है। यह केवल घटनाओं का संकलन नहीं लगती, बल्कि बैंक और उसके पाठकों के बीच एक सार्थक संवाद का माध्यम प्रतीत होती है। इस अंक का संपादकीय लेख स्पष्ट दिशा और संतुलित दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। विषयों को बिना किसी अतिरिक्त अलंकरण के सहज और उद्देश्यपूर्ण ढंग से रखा गया है जिससे पाठक को संदर्भ और निरंतरता दोनों का अनुभव होता है।

लेखों में विशेष रूप से श्री वी. एस. मिश्रा का वृद्धावस्था पर लिखा गया लेख उल्लेखनीय है। यह लेख जीवन के उत्तरार्ध को बोझ या अवसान के रूप में नहीं, बल्कि समझ, गरिमा और तैयारी के एक महत्वपूर्ण चरण के रूप में प्रस्तुत करता है। इसमें अनुभव की गहराई और मानवीय दृष्टि स्पष्ट झलकती है जो इसे सभी आयु वर्ग के पाठकों के लिए प्रासंगिक बनाती है। इसके अतिरिक्त सुश्री डॉली की कविता "नींद" ने पत्रिका को एक शांत और भावनात्मक आयाम दिया। संपादक के रूप में आपने विविध विषयों और रचनाओं को संतुलन और उद्देश्य के साथ प्रस्तुत किया है। आशा है कि 'अंकुर' भविष्य में भी इसी संवेदनशीलता और स्पष्टता के साथ पाठकों तक पहुंचती रहेगी।

-सुनिंत कौर
क्लिनिकल थैरेपिस्ट एवं पर्सनैलिटी स्ट्रैटेजिस्ट
नई दिल्ली-110064

आपके बैंक की तिमाही हिंदी पत्रिका 'राजभाषा अंकुर' का सितंबर, 2025 अंक प्राप्त हुआ। इसके लिए आपका हृदय से आभार और धन्यवाद! पत्रिका में प्रकाशित सामग्री बहुत ही ज्ञानवर्धक और रोचक है। राजभाषा हिंदी के महत्व पर केंद्रित संपादकीय हमें हिंदी पर गर्व करने और हिंदी में आधिकारिक कार्य करने के लिए प्रेरित करता है। पत्रिका के सभी लेख स्तरीय और समसामयिक विषयों पर लिखे गए हैं। लेखों के चयन में संपादक मंडल की दूरदर्शिता और गहन अनुभव की झलक स्वतः दिखाई पड़ती है।

पत्रिका में प्रकाशित लेख 'अमेरिका द्वारा लगाए गए टैरिफ का भारतीय अर्थव्यवस्था पर प्रभाव' जहां समसामयिक मुद्दों को छूता है वहीं 'ऑफ-साइट मॉनिटरिंग यूनिट (ओएमयू)' हमें निवारक सतर्कता के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है। 'बैंक में ग्राहक सेवा प्रतिनिधि की भूमिका' तथा 'भावी बैंकिंग की चुनौतियां' जैसे लेख बैंकिंग के विभिन्न पहलुओं से अवगत कराते हैं और हमारा मार्गदर्शन करते हैं। 'वृद्धावस्था' लेख जहां आज के परिवेश में वृद्धजनों की समस्या को उजागर करता है वहीं 'आ अब लौट चलें' तथा 'प्रतिस्पर्धा' कहानियां हमें जीवन में क्रमशः गांव और कर्म की महत्ता समझाती है। एक बेहतरीन और सार्थक अंक के प्रकाशन के लिए संपूर्ण संपादक मंडल को साधुवाद और बधाई तथा आगामी अंक के प्रकाशन हेतु अग्रिम शुभकामनाएं।

-मनीषा शर्मा
सहायक महाप्रबंधक (राजभाषा)
पंजाब नैशनल बैंक, प्रधान कार्यालय, नई दिल्ली

संपादकीय

प्रिय पाठकगण,

हिंदी पत्रिका 'राजभाषा अंकुर' का दिसंबर-2025 अंक आपको सौंपते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। बैंकिंग प्रणाली किसी भी विकसित अथवा विकासशील देश का आधार स्तंभ है। अपने आरंभिक अवस्था से लेकर बैंक के कंप्यूटरीकरण तक और उससे आगे डिजिटल बैंकिंग व वित्तीय समावेशन में भी बैंक कार्मिकों की प्रासंगिकता लगातार बनी हुई है। यह बैंक कार्मिकों पर निर्भर करता है कि वे अपनी भूमिका को और अधिक सशक्त करें।

वर्तमान में मोबाइल और इंटरनेट बैंकिंग सेवाएं, ग्राहकों को अपने खातों तक सुगम अभिगम तथा कभी भी व कहीं भी बैंकिंग संचालन करने की अनुमति देकर अद्वितीय सुविधा प्रदान करती हैं। डिजिटल रूप में बैंकिंग सुविधाएं विकसित होने से वित्तीय सेवाओं की पहुंच व्यापक और विस्तृत हुई है लेकिन इससे सुभेद्यता भी बढ़ी है। डिजिटल बैंकिंग में लाभों के साथ महत्वपूर्ण सुरक्षा चिंताएं भी समाहित होती हैं। सुविधाओं के उपभोग के लिए हमारा तकनीकी रूप से अधिक व्यवहार्य होना आवश्यक है क्योंकि दूसरी ओर कुछ लोग घात लगाए बैठे हुए हैं। जैसे-जैसे तकनीक विकसित हुई है, वैसे-वैसे अन्य पक्ष ने अपने आपको उसके अनुकूल कर लिया है। जालसाज़, बैंकिंग चैनलों और भुगतान गेटवे के माध्यम से साइबर अपराधों को अंजाम देने के लिए विभिन्न तरीकों का सहारा ले रहे हैं। इनमें फीशिंग, मनी म्यूल, विशिंग कॉल्स, डिजिटल अरेस्ट प्रमुख है लेकिन जिन माध्यमों में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है उनमें मनी म्यूल और डिजिटल अरेस्ट को वर्गीकृत किया जा सकता है।

मनी म्यूल, पीड़ित व्यक्तियों के खाते से निकाली गई राशि को प्राप्त करता है और उसे अंतरित करता है। कुछ मनी म्यूल जानते हैं कि वे आपराधिक गतिविधि में सहायता कर रहे हैं लेकिन अन्य इस बात से अपरिचित होते हैं कि उनके कृत्य, धोखेबाजों के लिए सहायक हैं। डिजिटल अरेस्ट में जालसाज, विधि प्रवर्तन अधिकारियों का छद्म रूप धारण करके कृत्रिम बुद्धिमत्ता निर्मित आवाज़ या वीडियो कॉल का उपयोग करते हैं तथा पीड़ितों को निधि अंतरित करने के लिए बाध्य कर सकते हैं। सामान्य जनमानस के अलावा पेशेवर भी इसके शिकार हो रहे हैं, कहीं-कहीं तो पीड़ित व्यक्ति, जीवन की हताशा सीमा तक पहुंच जाते हैं। आरंभ में आम जनमानस को इन गतिविधियों की जानकारी नहीं थी लेकिन संचार प्रणालियों की प्रचुरता के बावजूद इसमें अपेक्षित कमी नहीं हो रही है जबकि भारत सरकार तथा केंद्रीय बैंक द्वारा लोगों को जागरूक करने के उद्देश्य से समुचित प्रचार किए जा रहे हैं।

आप सभी से आग्रह है कि अपनी वित्तीय गतिविधियों में सतर्कता बरतें तथा इस संबंध में प्रशासन द्वारा चलाए जा रहे कार्यक्रमों के उद्देश्य को आत्मसात कर सतर्क एवं जागरूक नागरिक का उदाहरण प्रस्तुत करें। पत्रिका के इस अंक को देश के भविष्य अर्थात बच्चों को केंद्र में रखकर प्रकाशित किया जा रहा है। कृपया इस अंक के लिए अपनी प्रतिक्रिया हमें अवश्य उपलब्ध कराएं।

शुभकामनाओं सहित!

(गजराज देवी सिंह ठाकुर)
महाप्रबंधक सह मुख्य राजभाषा अधिकारी

बाल मनोविज्ञान

बालमन, विकास और अनुभवों का संक्षिप्त अध्ययन

सुनिंत कौर

आज के युग में बाल मनोविज्ञान केवल एक शिक्षा संबंधी विषय नहीं वरन प्रत्येक माता-पिता, शिक्षक और समाज के लिए अत्यंत आवश्यक समझ है। यह वह अध्ययन है जो हमें बताता है कि एक बच्चे का मन कैसे आकार लेता है, उसकी भावनाएं किस प्रकार विकसित होती हैं, उसका व्यवहार किन कारणों से बदलता है और उसके प्रारंभिक अनुभव उसके संपूर्ण जीवन को किस प्रकार प्रभावित करते हैं। आधुनिक विज्ञान यह प्रमाणित कर चुका है कि बच्चे के जीवन के प्रथम पाँच वर्ष उसके संपूर्ण मानसिक ढांचे की नींव रखते हैं। जन्म के समय मस्तिष्क जितना अल्प विकसित होता है, उतनी ही तेज़ी से वह प्रारंभिक वर्षों में अपने तंत्रिकीय जाल का विस्तार करता है। यही कारण है कि माता-पिता की उपस्थिति, वातावरण की स्थिरता, सुरक्षा की अनुभूति और भावनात्मक सहारा बच्चे की मानसिक अधिष्ठिति को गहराई से प्रभावित करते हैं।

न्यूरोसाइंस बताता है कि पाँच वर्ष की आयु तक बच्चे के मस्तिष्क का लगभग नब्बे प्रतिशत विकास पूरा हो चुका होता है। इस विकास में आनुवंशिक संरचना अपना योगदान अवश्य देती है परंतु वास्तविक आकार वह अनुभवों से पाता है। यह अनुभव चाहे माता-पिता की आवाज़ हों, घर का वातावरण हो, किसी प्रकार की असुरक्षा हो या प्रेम और अपनत्व की अनुभूति—सब मिलकर बच्चे के भीतर एक स्थायी भावनात्मक स्मृति-तंत्र का निर्माण करते हैं इसीलिए बाल मनोविज्ञान का केंद्र बिंदु केवल व्यवहार नहीं, बल्कि उसके पीछे छिपे हुए भावनात्मक अनुभवों को समझना है।

बच्चों के व्यवहार को लेकर एक सामान्य भ्रांति यह है कि बच्चा जो कुछ करता है, वह केवल अनुशासन या अव्यवस्था का विषय है किंतु शोध यह कहता है कि बच्चे का प्रत्येक व्यवहार उसकी

किसी न किसी आंतरिक आवश्यकता या उलझन का संकेत होता है। छोटे बच्चे भावनाओं को शब्दों में व्यक्त नहीं कर पाते इसलिए वे व्यवहार के माध्यम से ही अपने मन की पीड़ा, उलझन, भय या असमंजस प्रकट करते हैं। जब बच्चा चिड़चिड़ा हो जाता है, अचानक रोने लगता है, बार-बार वही बात पूछता है, अत्यधिक उत्तेजित हो जाता है या बिल्कुल चुप हो जाता है तो यह सब उस संदेश का रूप होता है जिसे वह कहना चाहता है लेकिन कह नहीं पाता। आधुनिक मनोविज्ञान इसे 'भावनात्मक संचालन का अभाव' कहता है। बच्चा यह नहीं समझ पाता कि वह क्या महसूस कर रहा है इसलिए वह उसे नियंत्रित भी नहीं कर पाता और उसका व्यवहार उसके भावनात्मक संसार की खिड़की बन जाता है।

विकासात्मक मनोविज्ञान का एक महत्त्वपूर्ण सिद्धांत यह भी है कि बच्चे का विकास अलग-अलग चरणों में होता है और प्रत्येक चरण की अपनी आवश्यकताएं होती हैं। प्रसिद्ध मनोवैज्ञानिक जाँ पियाजे के अनुसार बच्चा पहले संवेदनात्मक स्तर पर दुनिया को समझता है

फिर कल्पना और भाषा के माध्यम से उसे आकार देता है तथा धीरे-धीरे ठोस तर्क और अमूर्त सोच की ओर बढ़ता है। इसका अर्थ यह है कि जिस उम्र में वह किसी नियम को नहीं समझ सकता, उस उम्र में उससे कठोर अनुशासन की अपेक्षा करना उसके ऊपर अनावश्यक दबाव डालना है। यही कारण है कि बाल मनोविज्ञान केवल यह नहीं देखता कि बच्चा क्या कर रहा है, बल्कि यह भी देखता है कि उसकी आयु, अनुभव और मानसिक क्षमता उसे क्या करने की अनुमति देते हैं।

भावनात्मक सुरक्षा, बच्चे के विकास का सबसे बड़ा स्तंभ है। जॉन बोल्बी का 'आसक्ति सिद्धांत' बताता है कि बच्चा तभी स्वस्थ रूप से विकसित होता है जब उसे माता-पिता या देखभालकर्ता से गहरी भावनात्मक सुरक्षा प्राप्त होती है। यह सुरक्षा किसी भौतिक साधन से नहीं, बल्कि उपस्थिति से आती है—उस उपस्थिति से जो बताती है कि "मैं यहाँ हूँ, मैं तुम्हें समझता हूँ, तुम मेरे लिए महत्त्वपूर्ण हो।" जिन बच्चों को यह सुरक्षा मिलती है, वे अधिक आत्मविश्वासी होते हैं, अपनी भावनाओं को बेहतर समझते हैं, साथियों के साथ अच्छे संबंध बनाते हैं और कठिन परिस्थितियों से अधिक सहजता से उबर जाते हैं। इसके विपरीत जिन बच्चों को अस्वीकृति, भय, अस्थिरता या अत्यधिक आलोचना का अनुभव मिलता है, वे भीतर ही भीतर असुरक्षित महसूस करते हैं और यह असुरक्षा उनके व्यवहार में गुस्से, जिद, चुप्पी या भय के रूप में सामने आती है।

आज का समय बच्चों के लिए पहले से कहीं अधिक चुनौतीपूर्ण है। डिजिटल माध्यमों की उपलब्धता ने जहाँ सीखने के अवसर बढ़ाए हैं, वहीं लगातार मिलने वाले दृश्य, शोर और उत्तेजनाएं बच्चों के कोमल तंत्रिका-तंत्र (NERVOUS SYSTEM) को असंतुलित कर रही हैं। वैज्ञानिकों का कहना है कि आज के बच्चे पहले की तुलना में कहीं अधिक 'अतिउत्तेजना' का शिकार हैं। इसका सीधा प्रभाव उनकी ध्यान-क्षमता, नींद, धैर्य, भावनात्मक संतुलन और व्यवहार पर पड़ता है। यदि बच्चा बार-बार चिड़चिड़ा हो रहा है, गुस्सा कर रहा है या परेशान हो रहा है तो अत्यधिक संभावना है कि वह मानसिक रूप से थक चुका हो और उसे शांति, नियमित दिनचर्या और स्थिरता की आवश्यकता हो। इस संदर्भ में परिवार का शांत वातावरण, बच्चे के मानसिक विकास की एक अनिवार्य शर्त बन जाता है।

आज के बच्चे भी तनाव महसूस करते हैं, यद्यपि वे उसका नाम नहीं जानते। पढ़ाई का दबाव, तुलना, प्रतियोगिता, स्कूल का वातावरण, पारिवारिक तनाव, स्क्रीन की लत या माता-पिता की व्यग्रता—इन सबका असर बच्चे के कोमल तंत्रिका-तंत्र पर पड़ता है। शोध बताते हैं कि अत्यधिक तनाव से बच्चे के शरीर में कोर्टिसोल का स्तर बढ़ जाता है जो उसकी सीखने की क्षमता, ध्यान-स्थिरता और नींद को प्रभावित करता है। यदि तनाव लगातार बना रहे तो बच्चा या तो अत्यधिक गुस्सैल हो जाता है या भीतर ही भीतर सिमटने लगता है। ऐसे में माता-पिता की भावनात्मक उपस्थिति बच्चे का पहला और सर्वाधिक सुरक्षित सहारा बनती है। माता-पिता का व्यक्तित्व बच्चे पर गहरा प्रभाव डालते है। मनोवैज्ञानिक अल्बर्ट बंडूरा का सामाजिक-अधिगम सिद्धांत कहता है कि बच्चा वही सीखता है जिसे वह प्रतिदिन देखता है। यदि माता-पिता तनाव में रहते हैं, अक्सर गुस्सा करते हैं या संघर्ष के समय ऊंची आवाज़ में प्रतिक्रिया देते हैं तो बच्चा भय, उलझन और असुरक्षा सीखता है। इसके विपरीत यदि माता-पिता संवाद, धैर्य और संतुलन से परिस्थितियों को संभालते हैं तो बच्चे के भीतर भी वही आदतें विकसित होती हैं। बाल मनोविज्ञान का यह अत्यंत महत्त्वपूर्ण पक्ष है कि कोई बच्चा, माता-पिता की भावनात्मक अवस्था को अपने भीतर "सह-नियोजन" के रूप में अनुभव करता है। जिस घर में शांति होती है, वहाँ बच्चा सहज रूप से सुरक्षित महसूस करता है।

भारतीय समाज की बुनावट ही बच्चे के मन को प्रभावित करती है। संयुक्त परिवारों में पले बच्चे अक्सर रिश्तों की विविधता, विभिन्न स्वभावों और सामूहिकता को बहुत जल्दी सीख लेते हैं जबकि एकल परिवारों में पले बच्चों को माता-पिता से अधिक भावनात्मक

उपस्थिति की अपेक्षा होती है। आधुनिक शहरी जीवन, नौकरी का दबाव, लंबे कार्य-दिवस और मोबाइल आधारित व्यस्तता ने बच्चों के साथ बिताए जाने वाले वास्तविक समय को कम कर दिया है। यह कमी कई बार बच्चे के भीतर अनजानी बेचैनी, ध्यान की कमी और भावनात्मक संकुचन के रूप में उभरती है। बाल मनोविज्ञान यह मानता है कि बच्चे का मन केवल माता-पिता से ही नहीं, बल्कि संपूर्ण सामाजिक वातावरण से आकार पाता है। विद्यालय, पड़ोस, संबंधी और यहाँ तक कि माता-पिता के मित्र भी उसकी मानसिक दुनिया में अपनी छाप छोड़ते हैं।

अनुशासन और दंड के बीच का अंतर समझना भी आवश्यक है। अनुशासन का अर्थ है बच्चे को दिशा देना, उसे समझाना और उसके लिए स्पष्ट सीमाएं निर्धारित करना। दंड का उद्देश्य भय उत्पन्न करना होता है जबकि अनुशासन का उद्देश्य उत्तरदायित्व विकसित करना होता है। शोध बताते हैं कि भय से बच्चा अस्थायी रूप से चुप हो जाता है परंतु लंबे समय में वह अपनी भावनाओं को दबाना सीख लेता है। इसके विपरीत, सम्मानपूर्ण अनुशासन बच्चों में आत्म-नियंत्रण, धैर्य और सही-गलत की समझ विकसित करता है। जब बच्चा गलती करता है और माता-पिता उस गलती को शांतिपूर्वक समझाते हैं तो वह उत्तरदायित्व स्वीकारना सीखता है। यह सीख भविष्य के लिए उसके व्यक्तित्व की आधारशिला बनती है।

समस्त बच्चे अद्वितीय होते हैं। उनकी तंत्रिका-रचना, सीखने की शैली, संवेदनाओं को समझने का ढंग और भावनात्मक प्रतिक्रिया इत्यादि अन्य बच्चों से भिन्न हो सकती हैं। इसी कारण बच्चों की तुलना करना, उनके आत्म-मूल्य पर गहरी चोट छोड़ता है। एक बच्चा किसी विषय में तेज़ हो सकता है जबकि दूसरा किसी अन्य क्षेत्र में उत्कृष्ट हो सकता है। बाल मनोविज्ञान हमें यह सिखाता है कि बच्चे की गति, उसके स्वभाव और उसकी अभिव्यक्ति को समझते हुए ही उसका विकास संभव है। यदि माता-पिता बच्चे की तुलना उसके मित्रों या भाई-बहनों से करते हैं तो बच्चा, स्वयं को अपर्याप्त महसूस करने लगता है जो उसके आत्मविश्वास को कमजोर करता है।

भावनाओं का विकास भी बच्चे के व्यक्तित्व का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है। जिस बच्चे को भावनाओं के शब्द सिखाए जाते हैं—जैसे गुस्सा, डर, उलझन, खुशी, थकान—वह अपनी भावनाओं को पहचानना और व्यक्त करना सीख जाता है। यह प्रक्रिया उसके भीतर भावनात्मक संतुलन विकसित करती है। आधुनिक मनोविज्ञान का सिद्धांत है कि जिस भावना का नाम लिया जा सके, उसे नियंत्रित किया जा सकता है या फिर जब बच्चा कह पाता है कि "मैं परेशान हूँ" या "मुझे डर लग रहा है", तो उन भावनाओं की तीव्रता स्वतः कम होने लगती है।

बच्चे कहानियों के माध्यम से दुनिया को समझते हैं। भारतीय परंपरा में दादी-नानी की कहानियां केवल मनोरंजन नहीं थीं, वे बच्चे की कल्पना, नैतिकता, भावनात्मक संतुलन और सांस्कृतिक पहचान को मजबूत करती थीं। आधुनिक मनोविज्ञान भी यह स्वीकार करता है कि कहानी सुनने से बच्चे का मस्तिष्क 'विज़ुअलाइज़ेशन' की क्षमता विकसित करता है जो आगे चलकर समस्या-समाधान और रचनात्मकता की नींव बनती है। जब माता-पिता बच्चे से नियमित संवाद करते हैं, उसकी बातों में रुचि दिखाते हैं और उसकी जिज्ञासाओं को सम्मान देते हैं तो बच्चा आत्मविश्वास के साथ स्वयं को व्यक्त करना सीखता है। भाषा एक साधन मात्र नहीं—यह बच्चे की सोच की दिशा तय करने वाला माध्यम है।

खेल भी बच्चे के मन का एक आवश्यक आयाम है। खेल के माध्यम से बच्चा अपने अनुभवों को पुनर्निर्मित करता है, अपनी कल्पना का विस्तार करता है और अपनी भावनाओं को सहजता से व्यक्त करता है। यही कारण है कि प्ले-थैरेपी बच्चों के उपचार का एक अत्यंत प्रभावी साधन माना जाता है। खेल के समय बच्चा अपने आप में सबसे अधिक स्वाभाविक होता है और यही स्वाभाविकता उसके भावनात्मक विकास का स्रोत बनती है।

बाल मनोविज्ञान का एक गहन सत्य यह है कि माता-पिता जिन भावनाओं से गुज़रते हैं, वही भावनाएं बच्चा अवशोषित कर लेता है। यदि माता-पिता लगातार चिंता में रहते हैं तो बच्चा भी अनजाने में चिंताग्रस्त होने लगता है। यदि माता-पिता अवसाद या भावनात्मक थकान से जूझ रहे हैं तो बच्चा भीतर ही भीतर असुरक्षा अनुभव करने लगता है। इसी कारण विशेषज्ञ कहते हैं कि 'स्वस्थ माता-पिता ही स्वस्थ बच्चे को जन्म देते हैं।' माता-पिता का अपना भावनात्मक स्वास्थ्य बच्चे के मन की सबसे बड़ी पूँजी है।

समापन में कहा जाए तो बाल मनोविज्ञान हमें यह समझने का निमंत्रण देता है कि बच्चा केवल एक छोटा मनुष्य नहीं है बल्कि एक पूर्ण संसार है जो लगातार सीख रहा है, महसूस कर रहा है, बढ़ रहा है और बदल रहा है। उसका मन अत्यंत कोमल है लेकिन भीतर से अत्यंत सशक्त भी है—यदि उसे सही दिशा, सुरक्षा, सहारा और स्थिरता प्राप्त हो। जब बच्चा यह महसूस करता है कि उसे समझा जा रहा है, सुना जा रहा है और स्वीकार किया जा रहा है, तभी उसका वास्तविक विकास आरंभ होता है। यही बाल मनोविज्ञान का सार है कि बच्चे के मन को दबाया नहीं, बल्कि समझा जाए; उसकी भावनाओं को अनदेखा नहीं बल्कि सुना जाए; और उसके व्यक्तित्व को तुलना की कसौटी पर नहीं, बल्कि उसकी विशिष्टता के आधार पर परखा जाए।

-क्लिनिकल थैरेपिस्ट एवं पर्सनैलिटी स्ट्रैटेजिस्ट
नई दिल्ली-110064

"प्रकाश पर्व"

सिख धर्म के संस्थापक श्री गुरू नानक देव जी के 556 वें प्रकाश पर्व के अवसर पर बैंक के रोहिणी, नई दिल्ली स्थित स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र में लंगर का आयोजन किया गया। इस अवसर पर प्रधानाचार्य श्री अंकित आनंद तथा स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र के अन्य कार्मिकों ने लंगर वितरण किया। बैंक, अपनी सांस्कृतिक विरासत को समृद्ध करने के उद्देश्य से प्रत्येक वर्ष गुरु पर्व का आयोजन करता है।

हिंदी कार्यशाला

आंचलिक कार्यालय फरीदकोट

आंचलिक कार्यालय दिल्ली-II

आंचलिक कार्यालय कोलकाता

आंचलिक कार्यालय गुवाहाटी

आंचलिक कार्यालय भोपाल

आंचलिक कार्यालय गुरुग्राम

हिंदी कार्यशाला

आंचलिक कार्यालय होशियारपुर

आंचलिक कार्यालय आगरा

आंचलिक कार्यालय लखनऊ

आंचलिक कार्यालय पटना

आंचलिक कार्यालय बरेली

स्टाफ प्रशिक्षण कॉलेज, रोहिणी

हाशिए की आवाज़

(श्याम बेनेगल की फिल्मी दुनिया के झरोखे से...)

निशात कक्कड़

"जब तक मुझमें ताकत है और मेरा दिमाग काम कर रहा है, मैं फिल्में बनाना चाहूंगा"

-श्याम बेनेगल

एक ऐसे फिल्मकार जिन्होंने फिल्मी दुनिया को लीक से हटकर कहानियां पेश की। इनकी कहानियों की पृष्ठभूमि समाज के ऐसे वर्गों की कहानी पर्दे पर उकेरती है जिन्हें समाज ने हाशिए पर धकेला है। अपनी पहली फिल्म से उन्होंने समाज के एक ऐसे वर्ग जिसकी गूंज साहित्य जगत में अभी धीमी सुनाई पड़ रही थी, की आवाज़ को मुखर किया। अपनी फ़िल्मों के माध्यम से उन्होंने समाज के हाशिए पर खड़े लोगों की समस्याओं को मुख्य धारा में शामिल किया। उनके प्रति होने वाली क्रूरता पर प्रश्न चिह्न लगाए और समाज में इस वर्ग के लिए संवेदनाएं जागृत करने का कार्य किया।

भारतीय सिनेमा का आरंभ मूलतः भारतीय फिल्म 'राजा हरिश्चंद्र' के निर्देशक दादा साहेब फाल्के द्वारा माना जाता है जिसे वर्ष 1913 में प्रदर्शित किया गया था। भारतीय सिनेमा के जनक के रूप में समादृत फाल्के की इस फिल्म ने भारतीय सिनेमा की नींव रखी एवं नई पीढ़ी को इस दिशा में कार्य करने और अपनी परिकल्पनाओं को परदे पर उतारने के लिए प्रेरित किया। यह संयोग ही है कि श्याम बेनेगल की प्रतिभा को उनकी सामाजिक यथार्थ को पेश करती हुई फिल्मों और एक अलग सिनेमा के सृजन के दृष्टिकोण से वर्ष 2005 में दादा साहब फाल्के पुरस्कार से सम्मानित किया गया।

हिंदी सिनेमा का आरंभ आदर्शवादी समाज की स्थापना के उद्देश्य से रंगमंचीय प्रदर्शनों, लोककथाओं और धार्मिक विषयों के साथ रचा गया। प्रथम हिंदी सवाक फिल्म या टॉकीज 'आलम आरा' वर्ष

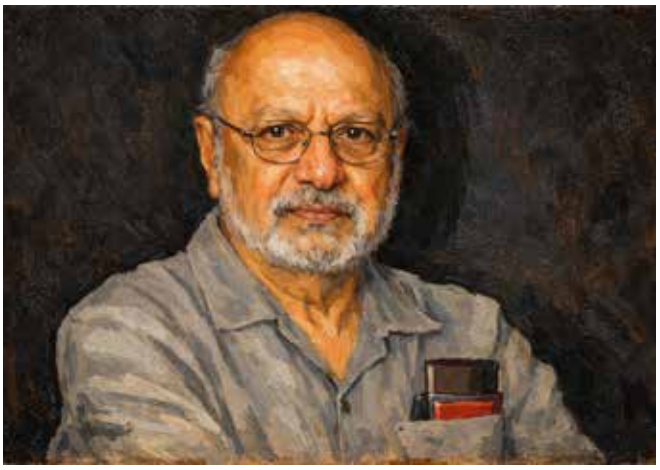

1931 में प्रदर्शित हुई जो एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी। इस फिल्म ने भारतीय सिनेमा में संगीतमय कथा-वाचन की नींव रखी जिसने आगे चलकर इस उद्योग की विशिष्ट पहचान का निर्माण किया। वर्ष 1940 से 1960 को प्रायः भारतीय सिनेमा के स्वर्णिम युग के रूप में देखा जाता है। यह युग कलात्मक नवीन शैलियों, प्रभावशाली फिल्म निर्देशकों के उद्भव और सामाजिक विषयों की खोज का युग था। इस युग ने हिंदी सिनेमा को राज कपूर, गुरु दत्त और बिमल रॉय जैसे प्रतिभाशाली निर्देशक दिए। इस युग की फिल्मों ने गरीबी और भूमिहीनता जैसी सामाजिक समस्याओं को उजागर किया, जो हिंदी सिनेमा में यथार्थवाद की ओर एक महत्त्वपूर्ण संक्रमण को परिलक्षित करता है। यह युग भारतीय सिनेमा के सांस्कृतिक और कलात्मक उत्कर्ष का प्रतीक था जिसने न केवल राष्ट्रीय बल्कि अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी सिनेमा के स्वरूप को नया आयाम प्रदान किया।

इस युग के पश्चात सिनेमा में यथार्थवादी सिनेमा का आरंभ हुआ जो थोथे आदर्शवादी का विरोध करता है। इसी समय समानांतर सिनेमा

ने हिंदी सिनेमा की मुख्यधारा में प्रवेश किया। श्याम बेनेगल की फिल्मों के निर्देशन की रुचि बालपन से ही थी। वे भारतीय पौराणिक कथाओं और लोककथाओं से बहुत प्रभावित थे जिन्हें उन्होंने किताबों, स्थानीय नाटकों और फिल्मों के माध्यम से जाना। उन्होंने सत्यजीत रे और विटोरियो-डी-सीका जैसे प्रसिद्ध फिल्मकारों से प्रेरणा ली। सत्यजीत राय के अवसान के पश्चात श्याम ने उनकी विरासत को संभाला और इसे समकालीन संदर्भ प्रदान किए। वे कहते हैं, "समूचा हिंदुस्तानी सिनेमा दो हिस्सों में किया जा सकता है, पहला सत्यजीत राय से पूर्व और दूसरा राय के पश्चात।" निश्चित तौर पर सत्यजीत रे के पश्चात ये कमान श्याम बेनेगल ने संभाली। उनके फिल्मों के सेट अन्य सेटों से बिल्कुल अलग होते था जहां साहित्यिक किताबों का जुलूस लगा रहता था। प्रसिद्ध अभिनेत्री पल्लवी जोशी ने अपने एक साक्षात्कार में श्याम बेनेगल पर बातचीत करते हुए कहा था कि उन्होंने मुझे ग्रूम किया है, अपने शुरुआती दिनों में मुझे पढ़ने की आदत उन्हीं से मिली।

श्याम बेनेगल की समानांतर सिनेमा ने जन मानस की चेतना को विकसित करते हुए सामाजिक यथार्थ को उद्घाटित किया। इसी परिप्रेक्ष्य में बेनेगल ने अंकुर (1974), मंथन (1976), भूमिका (1977), मंडी (1983), मम्मो (1994), जुबैदा (2001), वेल-डन अब्बा (2009) जैसी सार्थक फिल्मों का निर्माण किया। फिल्में हाशिए के समाज को स्थान देती हैं। इसके अलावा छोटे परदे पर जवाहर लाल नेहरू की पुस्तक 'द डिस्कवरी ऑफ इंडिया' को दूरदर्शन के लिए 'भारत एक खोज' के रूप में रूपांतरित किया। 'यात्रा', 'संविधान' जैसी टेली-शो के माध्यम से भारत के घर-घर में उन्होंने अपनी पहचान बनाई।

उन्होंने सही मायनों में समाज का आइना यथार्थवादी विषयों के साथ फिल्मों के माध्यम से हमारे समक्ष प्रस्तुत किया। उन्होंने एक ऐसे दौर में बेहद ही बेबाकी से समाज के दलित एवं सर्वहारा वर्ग, स्त्रियों एवं वेश्या के जीवन संघर्ष को हमारे समाने रखा जब एक एंग्री नायक का पदार्पण हिंदी सिनेमा में हो चुका था। ये एक ऐसी फिल्मों का दौर था जहां लोग मनोरंजन की तरफ ज्यादा आतुर होते थे और उन्हें लगता था कि फिल्म का नायक ही सारी समस्याओं को जोरदार फाइट करके दूर कर सकता है किंतु बेनेगल का उद्देश्य मनोरंजन से दूर समाज को यथार्थ से रू-बरू कराना था। उनका कहना था कि मैं नहीं मानता कि फ़िल्में सामाजिक-स्तर पर कोई बहुत बड़ा बदलाव ला सकती हैं, मगर उनमें गंभीर रूप से सामाजिक चेतना जगाने की क्षमता ज़रूर मौजूद है।

श्याम बेनेगल के निर्देशन में 'अंकुर' फिल्म की रचना हुई जो उनके आरंभिक फिल्मी सफर में एक बड़ी महत्वपूर्ण सफलता थी। इस समय के समानांतर सिनेमा ने युवा अभिनेताओं की एक पूरी नई पीढ़ी खड़ी की। श्याम बेनेगल की फ़िल्में यथार्थवादी सिनेमा के प्रति उनके समर्पण और आम लोगों के जीवन पर प्रकाश डालने की उनकी इच्छा को दर्शाती हैं। उनके प्रयासों ने भारतीय समानांतर सिनेमा को एक नई दिशा दी। उनके योगदान ने समकालीन फिल्मकारों को प्रेरित किया और यह सुनिश्चित किया कि उनकी कला, भविष्य की पीढ़ियों को प्रेरणा देगी। भारतीय समाज में दलित वर्ग एवं स्त्रियां सदा से ही दोयम दर्जे के रहे हैं। इनकी समस्याओं से समाज का कोई सरोकार नहीं है और न ही साहित्य और सिनेमा में इन्हें महत्वपूर्ण कथानक के रूप में समझा गया किंतु बेनेगल इसी रूढ़ पारंपरिक छवि को अपने सिनेमा में तोड़ते हैं।

कलात्मक सिनेमा को 'अंकुर' के बिना समझा ही नहीं जा सकता। उनकी यह फिल्म पारंपरिक मूल्यों पर चोट करती है जहां ग़ैर-बराबरी, शोषण, अत्याचार है। बड़ी ही बारीकी से इन्होंने प्रदर्शित किया कि वर्ण और वर्ग विभेद के कारण व्यक्ति कोई भी निर्णय लेने के लिए स्वतंत्र नहीं है। यह फिल्म हैदराबाद की सच्ची घटना पर आधारित है। कहानी के प्रमुख पात्र लक्ष्मी, किश्तया और सूर्या हैं। इनकी फिल्में दृश्यों में खुलती हैं, पंचायत का निर्णय और अगले ही क्षण मृत्यु का दृश्य इस समाज के बड़े-बड़े पदों पर आसीन पितृसत्तामक विचार को पोषित करने वालों का प्रतिनिधित्व करता है। यह समाज हमेशा से स्त्री से जुड़े सवालों को हाशिए पर धकेल देता है। 'अंकुर' भी इन्हीं संदर्भों को उद्घाटित करती है। जमींदारी प्रथा, जातिवाद, शोषण और हाशिए का समाज कहानी का मुख्य विषय है। शबाना आज़मी का किरदार उस मानसिक कशमकश को अभिव्यक्त करता है जिसमें आपका सामाजिक स्तर न केवल वर्तमान में आपके निर्णय लेने की क्षमता को प्रभावित करता है, बल्कि अच्छे भविष्य की कल्पना करने का भी हक नहीं देता।

लक्ष्मी और किश्तया जहां दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हैं, वहीं सूर्या पितृसत्तात्मक सोच से लैस सवर्ण वर्ग का। इस फिल्म का दर्शकों पर यह प्रभाव जरूर पड़ता है कि वे दलित स्त्रियों के

ऐतिहासिक यौन-शोषण पर सोचने के लिए विवश हो जाते हैं। यह ऐसे यौन शोषण हैं जो केवल धमकी या हिंसा के बल पर नहीं बल्कि संरक्षण, बराबरी देने के वादे, भोले-भाले रोमांस और शारीरिक निकटता के क्षणों में किए गए सुनहले वादों को आपस में गूंथकर तैयार चीजों के बल पर संभव हो जाता है। सूर्या, दोनों को अपने यहां काम पर रखता है लेकिन अपनी शराब की लत और चोरी की आदत से किश्तया को काम से निकाल देता है और अपनी पितृ-सत्तात्मक सोच से रूढ़ सूर्या, लक्ष्मी का फायदा उठाता है। शबाना आज़मी (लक्ष्मी) को जमींदार का बेटा अनंत नाग (सूर्या) जिंदगी भर की सामाजिक, आर्थिक सुरक्षा का आश्वासन देता है और फिर समाज में उसे उपेक्षित जीवन जीने पर मजबूर कर देता है। दलित स्त्री होने का लक्ष्मी को दोहरा अभिशाप मिलता है। सरू, लक्ष्मी को काम के बदले खाना देती है और लक्ष्मी हमेशा की तुलना में थोड़ा ज़्यादा चावल लेने की कोशिश करती है क्योंकि वह गर्भवती है। सरू, उसे खाना लाते हुए रंगे हाथों पकड़ लेती है फिर उसे चावल वापस रखने के लिए मजबूर करती है और कहती है, "तुम लोग भूखे मरते हो क्योंकि तुम चोरी करते हो।" पहले अपने शराबी पति की विसंगतियों के कारण उसे पूरे गाँव के आगे सूर्या के साथ हम बिस्तर होने पर शर्मिंदा होना पड़ा और दूसरा दलित होने के कारण सूर्या की पत्नी जो अपनी सवर्ण मानसिकता के कारण लक्ष्मी पर चोरी का आरोप लगाकर उसे घर से बाहर फेंक देती है। यहां बेनेगल ने एक स्त्री और उस पर भी दलित स्त्री की प्रताड़ना संवेदनात्मक रूप से प्रस्तुत किया है। बेनेगल, पंच के रूप में पितृसत्ता के क्रूरतम रूप से भी परिचय करवाते हैं। क्या पंचायत के द्वारा लिया गया निर्णय वास्तविकता में पितृसत्तामक की जड़ों को और मजबूत नहीं करता? क्या स्त्री को अपने जीवन के निर्णय लेने का कोई अधिकार नहीं? निम्न वर्ग का प्रतिनिधित्व कर रही शबाना आज़मी (लक्ष्मी) अंत में अनंत नाग (जमींदार) से कहती है 'हम तेरे खरीदे गुलाम नहीं हैं'। कहानी का अंत प्रतिरोध की आवाज़ को प्रतिध्वनित करता है। फिल्म के अंतिम दृश्य में अपनी बेबसी और गुस्से में एक बच्चा, जमींदार के घर पर पत्थर फेंकता है जिससे घर की खिड़की का कांच टूट जाता है और अगले ही क्षण फिल्म समाप्त हो जाती है।

यह प्रयोगधर्मी अंत, समाज के बीच के वर्ग भेद को बखूबी अभिव्यक्त करता है जहां अब हर वर्ग में सही और गलत के फ़र्क को समझा जा रहा है और उसके खिलाफ आवाज़ उठाने की चेतना विकसित हो चुकी है। शोषितों के बीच प्रतिरोध का स्वर प्रबल है। सिनेमा, सामाजिक बदलाव लाने में कितना सफल होता है यह विचारणीय है। 'अंकुर' की वह शोषित नौकरानी निस्संदेह एक पीड़ित औरत है लेकिन उसकी कहानी में भारतीय समाज में निहित मानवीय मूल्यों से विद्वेष, न्याय संबंधी विचार के प्रति उपेक्षा व उदासीनता, शक्तिशाली लोगों की जी-हूजूरी करने का यथार्थ रूपायित हो जाता है। यह फिल्म सामाजिक चेतना विकसित करती है।

राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार से सम्मानित अपनी इस पहली फिल्म में ही श्याम बेनेगल ने समाज के परतों को उधेड़ कर रख दिया। श्याम बेनेगल केवल एक फ़िल्मकार नहीं, बल्कि एक दूरदर्शी व्यक्तित्व थे। उन्होंने सिनेमा का इस्तेमाल समाज की वास्तविकताओं को दिखाने और गहरे बैठे सामाजिक नियमों को चुनौती देने के लिए किया। यथार्थवादी सिनेमा के प्रति उनका समर्पण और गहन कथाओं के माध्यम से विचारशीलता उत्पन्न करने की उनकी क्षमता ने भारतीय सिनेमा पर अमिट छाप छोड़ी। उनके शब्दों में "मैं अलग-अलग कहानियों को सामाजिक परिस्थितियों से अलग नहीं कर सकता। अगर मैं इसे अलग कर दूं तो मैं विषय के प्रति सच्चा नहीं हो पाऊंगा। एक फिल्म महज़ एक पोस्टर नहीं होती। यह सिर्फ एकतरफा नहीं होती, बल्कि पूरी ऐतिहासिक परिस्थिति का हिस्सा होती है और कहानी के रूप में इसका अतीत, भविष्य और वर्तमान से संबंध होता है। यह तभी जीवंत होता है।"

संदर्भ :

1) योगेश मैत्रेय, भारतीय सिनेमा और दलित पहचान : भारत जैसे जातिग्रस्त समाज के लिए ज़रूरी है 'पेरारियात्तवर', Janchowk.com, 19 अगस्त 2021

2) गोविन्द जी पांडेय, हिंदी फिल्मों में दलित पात्रों के समावेशन और उनकी भूमिका का अध्ययन, रीसर्च गेट, जून 2014

3) द टाइम्स ऑफ़ इण्डिया, 17 मार्च 2010

4) श्याम बेनेगल : एक दुनिया समानांतर... (हिंदी) वेबदुनिया हिंदी। अभिगमन तिथि: 14 दिसम्बर, 2012

-अधिकारी
शाखा मंगोलपुरी खुर्द, दिल्ली

संदेश – अपने बैंक के नाम

प्रभाकर मजूमदार

प्रत्येक व्यक्ति यह आकांक्षा रखता है कि उसे किसी व्यक्ति, परिवार, समाज, संगठन या किसी राष्ट्र द्वारा पहचान मिले और उससे जुड़ाव हो, जहां वह स्वयं को पूर्ण महसूस कर सके। पूर्णता आत्मसम्मान और उचित पहचान की भावना हो। पंजाब एण्ड सिंध बैंक वही है और हमेशा रहेगा। पूर्णता की यही अनुभूति, आज हमारे पास जो कुछ भी है, वह हमारे इस प्रतिष्ठित संगठन का दिया हुआ उपहार है जो हमारी माँ की तरह हमारी रक्षा करता है। इन 118 वर्षों के अंतराल में हमने अनेक उतार-चढ़ाव देखे हैं लेकिन कठिन समय में भी आगे बढ़ते रहने की भावना के कारण ही हम अपने प्रिय संगठन के जन्मदिन को आज भी उसके सफल अतीत की गौरवशाली उपलब्धियों के साथ संजोते और मनाते हैं।

मैंने अपने जीवन में और हमारे अनेक प्रिय ग्राहकों के जीवन में भी, कई सपनों को साकार होते देखा है जिन्होंने अपने स्वयं के घर बनाए, वाहन खरीदे, अपनी शिक्षा जारी रखी, अपने व्यवसायों में स्थापित हुए, विवाह व पारिवारिक समारोह के माध्यम से खुशियां संजोईं तथा चिकित्सा आपात स्थितियों से बाहर निकल पाए। यह सब हमारे इस प्रतिष्ठित बैंक के ऋण पोर्टफोलियो के कारण संभव हो सका जो व्यावहारिक रूप से सभी के लिए सुलभ और व्यवहार्य बना। बैंक ने जमा और ऋण क्षेत्रों में किफायती दरें प्रदान कर अनेक व्यावसायिक संस्थाओं के साथ एक सशक्त साझेदार के रूप में अपनी भूमिका निभाई।

हमारे प्रतिष्ठित बैंक द्वारा अपने प्रिय ग्राहकों की मूल्यवान बचत का मार्गदर्शन करने और उनकी देखभाल करने के लिए अपनाया गया सक्रिय दृष्टिकोण, प्रतिस्पर्धियों के बीच एक मजबूत पहचान बना चुका है। हमने ग्राहकों का मार्गदर्शन अपने परिवार के सदस्यों की तरह किया है। हमारा टैगलाइन "जहाँ सेवा ही जीवन - ध्येय है" केवल कुछ शब्द नहीं है, बल्कि वास्तव में हम सभी की आकांक्षा और जीवन-पद्धति का प्रतीक है। मुझे पंजाब एण्ड सिंध बैंक से एक कर्मचारी के रूप में जुड़े होने पर सदैव गर्व महसूस होता है क्योंकि यह बैंक हमारी देखभाल एक बच्चे की तरह करता है। जीवन और कार्य की सभी निश्चितताओं और अनिश्चितताओं के बावजूद, पंजाब एण्ड सिंध बैंक हम में से अनेक लोगों के लिए जीवनाधार बन गया है। मेरा बैंक, मेरे परिवार का सबसे उपयुक्त प्रतीक है। सुख-दुख में, हर परिस्थिति में मेरा बैंक हमेशा उन प्रमुख कारणों में से एक रहा है जिनकी वजह से मैं जीवित रहने और आगे बढ़ने की प्रेरणा पाता हूं। अन्य बैंकों की तरह हमारे बैंक में भी उतार-चढ़ाव और मतभेद रहे हैं लेकिन दिन के अंत में, चाहे कुछ भी हो जाए, हम एक-दूसरे के साथ खड़े रहते हैं। मेरा यह प्रतिष्ठित बैंक एक स्नेहमयी माँ का सर्वोत्तम उदाहरण है जो अपने परिवार की देखभाल सुनिश्चित करने के लिए हर संभव सीमा से आगे बढ़ जाती है।

सेवाओं का संस्थागतकरण, स्वामित्व की भावना का विकास, चुनौतियों को स्वीकार करना, सर्वोत्तम नैतिक प्रथाओं का पालन करना तथा सीमित संसाधनों में भी निरंतर प्रगति करना—ये सभी निश्चित रूप से हमें सफलता की सर्वोच्च सीढ़ी तक पहुंचाएंगे। दूरदर्शिता से युक्त सक्रिय नेतृत्व हमारे इस प्रतिष्ठित बैंक की गरिमा और गौरव को अवश्य बनाए रखेगा। अब समय आ गया है कि हम सभी मिलकर कार्य करें, ताकि आने वाले अनेक वर्षों तक हम अपने बैंक के शाश्वत स्थापना दिवस को गर्व और उल्लास के साथ मना सकें। आइए, हम सब एकजुट होकर सभी के कल्याण के लिए, अपने परिवार के लिए और अपने प्रिय बैंक पंजाब एण्ड सिंध बैंक के उत्थान हेतु कार्य करें।

"तुम मेरे लिए सब कुछ हो और यह कल्पना करना भी बहुत कठिन लगता है कि तुम्हारे बिना मैं जीवन कैसे आगे बढ़ा पाऊंगा।"

-आंचलिक प्रबंधक
आंचलिक कार्यालय गुवाहाटी

सतर्क बालमन – सुरक्षित भविष्य

निर्माण सामल

बालमन को विभिन्न तकनीकों, खेल-कूद, पाठ्य-पुस्तक आदि के माध्यम से सही और गलत में अंतर सिखाया जाता है और उनकी नैसर्गिक क्षमता के विकास को प्रभावित किया जाता है ताकि वह सही के लिए प्रेरित हो। इस तरह एक मजबूत नागरिक बनाने का प्रयास होता है जो परिपक्व होकर अपने सीखें हुए मूल्यों को अपने कार्यस्थल में विस्तारित करें। सतर्कता का मूल दर्शन भी यही है।

देश का भविष्य इस पर निर्भर करता है कि हम अपने बच्चों को आने वाली चुनौतियों के लिए किस प्रकार तैयार करते हैं। बच्चों का मन कच्चे घड़े की तरह ही होता है तथा उनको सही आकार व उपयोगी बनाना उनके अभिभावकों का दायित्व है। एक सरल तरीका है, बच्चों की शिक्षा पर समुचित ध्यान। अच्छी शिक्षा जिसमें अक्षय ज्ञान, विश्लेषण क्षमता के साथ शारीरिक-मानसिक विकास जिसमें खेल-कूद आदि भी सम्मिलित विषय हों। तकनीकी प्रगति या यूं कहें कि तकनीकी क्रांति के इस युग में समाज को जहां तकनीक के प्रयोग का लाभ मिल रहा है, वहीं कुछ जटिलताएं भी समाज को भ्रमित दिशा में ले जा रही हैं। अन्य पक्ष के अंतर्गत बाजारवाद के प्रभाव में सब कुछ हासिल कर लेने के लिए विकृति से युक्त प्रतिस्पर्धा भी समाज को खोखला कर रही है। बड़े तो इस अंधी दौड़ में शामिल हैं ही, परिवार का बच्चा भी जाने-अंजाने में इन विकृतियों को स्वीकार करने लगा है। ऐसी स्थिति में एक स्वस्थ भविष्य के लिए आवश्यक है कि बच्चों को सही और गलत का समुचित ज्ञान दिया जाए जिससे वह उन जोखिमों का सामना करने में सक्षम हो सकें जो तकनीकी जटिलताओं के कारण समाज में स्थापित होते जा रहे हैं।

सतर्कता का सीधा अभिप्राय है निरंतर जागरूकता, ईमानदारी और दूरदर्शिता ताकि खतरे की स्थिति को भांपकर उचित रोकथाम हो सके और यदि संभव हो तो ख़तरे को ही रोका जा सके। आज की शिक्षा प्रणाली में एक कोशिश तो है पर इतने अनमने तरीके से कि उसे बच्चे आत्मसात नहीं कर पाते। नैतिक शिक्षा का पाठ्यक्रम है, पुस्तकें भी हैं पर बच्चे उसे रटकर परीक्षा में सफल हो जाने से अधिक महत्व नहीं देते क्योंकि शिक्षक भी यही चाहते हैं कि परीक्षाफल ठीक-ठाक हो। इस तथ्य पर कोई ध्यान नहीं देता कि नैतिक विषय, वास्तव में आचरण का विषय है। इस प्रणाली में अपेक्षित सुधार की आवश्यकता है जो नैतिक शिक्षा के वर्ग में विद्यार्थियों को परीक्षा से अधिक उनके आचरण में सुधार के लिए शिक्षा दे। यहीं से प्रारंभ होगी सतर्क बालमन की जो निष्ठा और ईमानदारी को व्यवहार में सम्मिलित कर लें।

वर्ष 2025 में सतर्कता विभाग ने नारा दिया कि सतर्कता हमारी साझी जिम्मेदारी है। विभाग अपने दायरे में इसके लिए प्रयास करता रहेगा और हर एक नागरिक जागरूक रहेगा ताकि समाज में भ्रष्टाचार के मामलों को उजागर करने में वह सहयोग भी दे तथा इस प्रकार की मानसिकता के साथ कर्तव्य का निर्वहन करें कि राष्ट्र की छवि भी निखरे और समाज का कल्याण भी हो। भ्रष्टाचार ऐसे दीमक की तरह है जो समाज को अंदर से खोखला कर देता है। समाज का दायित्व है कि अपनी अस्मिता के लिए, विकास और परिवर्तन

के लिए हर सामाजिक इकाइयों को सतर्क, जागरूक रहना चाहिए जो संदिग्ध गतिविधियों की पहचान करें, उसे उजागर करें और ऐसे मामलों की तार्किक परिणति के लिए सरकार और विभाग के साथ सहयोग करें। यही है सामाजिक साझी जिम्मेदारी, जिसका विस्तार है इसकी तैयारी की जो समाज द्वारा अपने बच्चों को सद्गुणों का महत्व समझाए, ईमानदारी के लाभ और नैतिक आदर्शों को अपनाने के लिए अभिप्रेरित करें।

सतर्कता प्रशासन के दो पहलू हैं, निषेधात्मक सतर्कता और दंडात्मक सतर्कता। निषेधात्मक सतर्कता का प्रमुख दायित्व नैतिक कदाचार की संभावना को समाप्त करना है। इसके लिए वह व्यक्ति विशेष की पृष्ठभूमि, आचरण आदि की समीक्षा के साथ कार्य विशेष के लिए बनाए गए नियमों के अनुपालन पर ध्यान केंद्रित करते है। किसी भी संदेह की स्थिति में वह उन जोखिमों का आकलन भी करती है जो नियम विरुद्ध व्यवहार के कारण हो सकते हैं लेकिन व्यवहार में निषेधात्मक सतर्कता की समीक्षा कार्य निष्पादन के बाद होती है और यदि कोई चूक हो चुकी हो, क्षति की स्थिति आ चुकी हो तो दंडात्मक सतर्कता की कार्यवाही होती है। इसलिए सामान्यतः प्रशिक्षण के द्वारा कार्मिकों को सचेत किया जाता है। जिस समय यह प्रशिक्षण दिया जाता है, सभी परिपक्व व्यक्ति होते है। जाहिर है उनकी स्थिति द्वंद्व की स्थिति है क्योंकि उनका मूल चरित्र तो गढ़ा जा चुका होता है। उनके लिए नैतिक प्रशिक्षण, सुधार का प्रयास मात्र है। इसके विपरीत यदि बालमन को ही उन मूल्यों को बता दिया जाएगा, समझा दिया जाएगा और उनका पालन-पोषण, उनकी शिक्षा-दीक्षा नैतिकता के मानदंडों के अनुरूप हो तो बड़े होकर वह उन्हीं दिव्य मूल्यों, नैतिक व्यवहार, ईमानदारी, कर्तव्य बोध के ध्वजवाहक बन जाएंगे और ऐसा हर बच्चा स्वयं निषेधात्मक सतर्कता का सहयोगी होगा। उसके लिये सतर्कता की समीक्षा उसकी प्रगति के नए आयाम का विस्तार करेगी।

सतर्कता से संबंधित कोई भी व्यक्ति अथवा पूरा विभाग सामान्य कार्मिकों के लिए दुःस्वप्न की तरह होता है। ऐसा लगता है कि इस विभाग का काम बेचारे कार्यभार से दबे कार्मिकों को दबोचने के लिए ही किया जाता है। वास्तव में सतर्कता का उद्देश्य किसी भी संस्था में उच्च नैतिक मापदंडों की स्थापना है ताकि संस्था की छवि निखरे और वहां काम करने वालों की निष्ठा और विश्वसनीयता

प्रामाणिक हो। इतने ऊंचे आदर्शों के बावजूद कार्मिकों में व्याप्त भय के कारण पता लगाने पर दो बात समझ में आती है। पहला, सतर्कता के अंतर्गत निषेधात्मक सतर्कता और निगरानी सतर्कता के बीच जो अंतर है, वह सतर्कता से संबंधित अधिकारियों ने शायद अनदेखा कर दिया है। दूसरे, काल, परिस्थिति, दवाब और प्रतियोगिता से उत्पन्न दवाब का कार्मिकों पर प्रभाव का सही आकलन नहीं किया जाना। कार्मिकों की दृष्टि से भी दो बातें सामने आती है। पहला, सतर्कता को अपने कार्यक्षेत्र में हस्तक्षेप करने वाला बाह्य तत्व समझना और दूसरे, सतर्कता की गतिविधियों से आत्म-विश्वास का क्षरण। यहां उभय पक्ष को समझना होगा कि दोनों ही एक-दूसरे के पूरक हैं और दोनों का उद्देश्य संस्था का व्यावसायिक और नैतिक उत्थान है। नैतिक मूल्यों से समझौता किए बिना लाभार्जन के अवसर तलाशना दोनों पक्षों के लिए समान रूप से महत्वपूर्ण है। सतर्कता विभाग की जिम्मेदारी है कि ऐसा न समझा जाए कि वह अकेले सदाचार के पैरोकार हैं। संस्था से जुड़े सभी नैतिक दायित्व के लिए उत्तरदायी हैं। अलग-अलग विभाग और विधा में कुछ मौलिक नैतिक मूल्य हैं जैसे ईमानदारी, सत्यनिष्ठा, जवाबदेही सबके लिए समान पर कुछ ऐसे मूल्य हैं जो व्यावहारिक जगत में कार्य निष्पादन के लिए उचित होते हैं और हो सकता है कि वहां सामान्य निर्देशों से अलग निर्णय-काल और परिस्थिति के अनुकूल लिया गया हो। वहां नैतिकता का क्षरण नहीं होता। सतर्कता विभाग को अन्य विभाग के योगदान को रहस्य की दृष्टि से न देख कर मानवीय दृष्टिकोण से देखने पर परस्पर विश्वास मजबूत होगा और यह संस्था के नैतिक और व्यावहारिक मूल्य को भी सशक्त करेगा। निगरानी और निषेधात्मक सतर्कता

प्रक्रियाओं में बारीक अंतर है। निगरानी सतर्कता जहां नकारात्मक पक्ष है, वहीं निषेधात्मक सतर्कता सकारात्मक पक्ष है। रेल यात्रा के क्रम में अक्सर एक नारे पर दृष्टि अटक जाती थी, सीधा सादा नारा था पर उसका भावार्थ जीवन का एक बड़ा सत्य है - सतर्कता हटी, दुर्घटना घटी। इस प्रकार सतर्कता को भी जीवन में एक दिनचर्या की तरह अंगीकार करना आवश्यक है। अगर जीवन को निरापद रखना है तो सतर्क रहना, जागरूक रहना, उसकी पहली शर्त है। इसी तर्क का विस्तार यदि व्यावसायिक क्षेत्र में किया जाए तो स्पष्ट होगा कि नियमों का अनुपालन, कर्तव्य के प्रति निर्दोष प्रतिबद्धता, साध्य के साथ साधनों की पवित्रता, जोखिम के स्रोतों पर नजर, प्रलोभन का तिरस्कार, आत्म अनुशासन, सादा जीवन, उच्च विचार के साथ ईमानदार प्रयास और सत्यनिष्ठा आदि ऐसे मूल्य हैं जो जीवन को आदर्श स्वरूप तो देते ही हैं, व्यक्तित्व के साथ सतर्कता का समायोजन करते हुए अपने लिए शांति और संतोष, समाज के लिए ठोस विकास और संगठन की छवि को उज्ज्वल आधार भी देते हैं। संसाधनों का सही उपयोग, ज्ञान का समुचित प्रयोग और सटीक निर्णय जो तथ्यों के वस्तुनिष्ठ विश्लेषण पर आधारित हो, सतर्कता के ही आयाम हैं और इन मूल्यों को अपनाने से जो खुशी और संतोष मिलता है वहीं जीवन को परिपूर्ण करता है।

भ्रष्टाचार एक बीमारी है जिसके माध्यम से क्षणिक सुख की अनुभूति की जा सकती है किंतु यह व्यक्ति के मूल्यों का नैतिकता का ऐसा क्षरण करता है जो सतत असंतोष को जन्म देता है और नैतिक बल को पूरी तरह समाप्त कर देता है। भारत में उच्च पदों पर भ्रष्टाचार की सूचना और भ्रष्टाचार निरोध के लिए वर्ष 1964 में संथानम समिति की सिफारिश पर केंद्रीय सतर्कता आयोग का गठन एक प्रभावी कदम था। सरकारी संस्थानों में भ्रष्टाचार पूरे देश की अर्थव्यवस्था के लिए हानिकारक है और आवश्यकता थी ऐसे ही प्रभावी संस्थान की। निगरानी के अतिरिक्त आयोग ऐसे वातावरण को तैयार करता है जिससे भ्रष्टाचार के मामलों की रोकथाम की जा सके। चूंकि भ्रष्टाचार की जड़ इतनी गहरी और सर्वव्यापी है कि इस बीमारी का इलाज तीन स्तरों पर आवश्यक है। प्रथम, निगरानी एवं दंडात्मक, सतर्कता प्रयासों से भ्रष्टाचारियों की जांच तथा दंड की ऐसी व्यवस्था जो किसी भी कर्मचारी अथवा अधिकारी के लिए उदाहरण हो जिससे वह इस प्रकार की गतिविधियों में सम्मिलित होने से बचे। दूसरे, नियमों की स्पष्टता और अनुपालन से संबंधित मामले को प्रारंभिक अवस्था में ही समझकर रोकथाम की व्यवस्था करना। तीसरे, सतर्कता के दर्शन की स्थापना और नैतिक शिक्षा के प्रसार पर ज़ोर। विद्यालय स्तर पर ही पैवलोवियन पद्धति से सच्चाई और ईमानदारी के लिए बच्चों को आकर्षित किया जाए जैसे ईमानदारी के लिए सराहना और पुरस्कार तो निश्चित ही ऐसे मूल्य बच्चों में प्रतिस्थापित होंगे। इस तरह धीरे-धीरे भ्रष्टाचार की जड़ ही शुष्क हो जाएगी। इससे वर्तमान में भ्रष्टाचार और भ्रष्टाचारी पर नकेल और भविष्य के लिए योजना का समायोजन करते हुए भ्रष्टाचार मुक्त भारत के लिए हमारा संकल्प भी पूरा हो सकता है तथा सतर्कता का लक्ष्य भी।

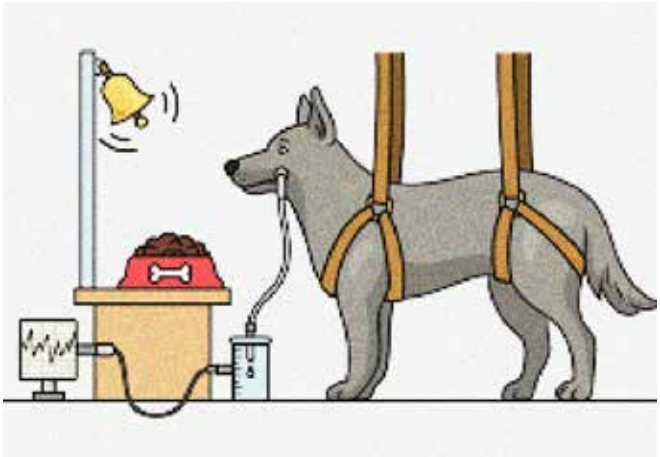

बालक का जन्म एक विशिष्ट परिवेश में होता है और प्रत्येक बालक के लिए यह परिवेश दूसरे से बिल्कुल भिन्न होता है। उन सब की मनः स्थिति अपने-अपने वातावरण से प्रभावित रहता है। शिक्षा वह माध्यम है जिसके द्वारा अलग-अलग परिवेश में पैदा हुए बालकों को एक विशिष्ट अनुभव के द्वारा समानता का पाठ पढ़ाया जाता है। मोटे तौर पर उन्हें जीवन संग्राम के लिए तैयार किया जाता है। उनकी पृष्ठभूमि जो भी हो, उन्हें सार्वभौमिक मूल्यों से अवगत कराया जाता है। उनके बालमन को विभिन्न तकनीकों, खेल-कूद, पाठ्य-पुस्तक आदि के माध्यम से सही और गलत में अंतर सिखाया जाता है और उनकी नैसर्गिक क्षमता के विकास को प्रभावित किया जाता है ताकि वह सही के लिए प्रेरित हो। इस तरह एक मजबूत नागरिक बनाने का प्रयास होता है जो परिपक्व होकर अपने सीखें हुए मूल्यों को अपने कार्यस्थल में विस्तारित करें। सतर्कता का मूल दर्शन भी यही है। ऐसे व्यावहारिक व्यक्ति को समर्थन देना जो व्यक्तिगत लाभ-हानि से इतर सार्वभौमिक मूल्यों के उत्पादन से अपने कार्य की परिस्थिति को संस्था के लक्ष्यों, समाज के आदर्शों और नैतिक मूल्यों के समन्वय

से परिवर्धित कर सकें। इस दृष्टि से सतर्कता की तैयारी का प्रारंभ बालमन के शिक्षण-प्रशिक्षण होना चाहिए।

बाल मन उत्सुक रहता है और इसमें सीखने की प्रवृत्ति भी होती है, इस अवस्था में मानव जो सीख लेता है, आजीवन उसके अवचेतन में वह स्थित होता है। सतर्कता का लक्ष्य नैतिक मूल्यों के सार को ग्रहण कर अपनी दिनचर्या में समाहित करना है और इसलिए सतर्कता की तैयारी प्राथमिक स्तर से हो तो परिणाम एक ईमानदार, निष्ठावान, सद्‌गुणों से स्फूर्त भविष्य होगा। भ्रष्टाचार, देश व समाज को नैतिक दृष्टि से खोखला बनाती है और उससे अधिक समाज में ऐसा विघटन पैदा करती है जो किसी भी स्तर पर राष्ट्र के लिए हितकारी नहीं है। सतर्कता, भ्रष्टाचार की रोकथाम के लिए सरकारी उपक्रम या उपकरण है जो सिद्धांत, कार्य-कुशलता, ईमानदारी और इसके विपरीत आचरण से उत्पन्न जोखिमों को न्यून करने का प्रयास करता है। बेहतर तरीका तो यह होगा कि हम नौनिहालों को बचपन से ही इन सद्‌गुणों को आत्मसात करते हुए समाज में स्वीकृत नैतिक व्यवहार के लिए प्रेरित करें। यही बच्चे बड़े होकर जब किसी संस्थान के साथ जुड़ेंगे तो सतर्कता के दर्शन को पूरी तरह अंगीकार करते हुए, उचित अनुचित के बोध के साथ व्यावसायिक और नैतिक जोखिम का साहस से प्रतिकार करेंगे। वर्ड्सवर्थ ने अपनी कविता में व्यर्थ ही नहीं लिखा था कि "CHILD IS THE FATHER OF MAN"। बचपन में जो भी रुचिकर लगता है, यौवन में उसी को प्राप्त करना जीवन का लक्ष्य बन जाता है। बचपन में जो आदत बनती है, बड़े होने पर वहीं आदतें बनी रहती हैं। सभी मनोवैज्ञानिक स्वीकार करते हैं कि बचपन की स्मृति, बचपन का अभाव, बचपन की सीख स्थाई रूप से अवचेतन में विद्यमान रहती है और जब व्यक्ति बड़ा होता है तो उसकी बचपन की अच्छी और बुरी बातों के साथ लगभग बना रहता है। अब कल्पना कीजिए कि जो बच्चा बचपन में ही सदाचार में निष्णात हो जाये तो वह समाज के हर अंग को अपने विचार और कृत्य से सदाचारी बनाने का प्रयास करेगा। वह मूलतः वही कार्य करेगा जो सतर्कता चाहती है।

-सहायक महाप्रबंधक
शाखा भुवनेश्वर, ओडिशा

"प्रकाश पर्व"

आंचलिक कार्यालय अमृतसर, पंजाब

किसान दिवस

बैंक ने 23 दिसंबर, 2025 को देश के विभिन्न राज्यों व केंद्र शासित प्रदेशों में स्थित अपने आंचलिक कार्यालयों में कृषि वित्तपोषण शिविरों का आयोजन करके किसान दिवस मनाया। आयोजन का मुख्य उद्देश्य भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ करना तथा खाद्य प्रसंस्करण के लिए भारत को एक वैश्विक केंद्र बनाने के लक्ष्य प्राप्ति में योगदान देना है। इस दौरान बैंक अधिकारियों ने कृषि-प्रसंस्करण उद्योग की अद्वितीय आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परिकल्पित वित्तपोषण योजनाओं, सरकार समर्थित पहलों और अनुकूलित ऋण उत्पादों पर किसानों, कृषि-उद्यमियों और खाद्य प्रसंस्करण इकाइयों का मार्गदर्शन किया। प्रधान कार्यालय में पदस्थ विभिन्न कार्यपालक, आंचलिक कार्यालयों में आयोजित कार्यक्रमों में विशेष रूप से उपस्थित रहे। उल्लेखनीय है कि बैंक ने खाद्य एवं कृषि प्रसंस्करण उद्योग की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए अपने विभिन्न कृषि उत्पादों को अनुकूलित किया है।

आंचलिक कार्यालय लखनऊ, उत्तर प्रदेश

आंचलिक कार्यालय मोगा, पंजाब

आंचलिक कार्यालय अमृतसर, पंजाब

भुवनेश्वर, ओडिशा

भुवनेश्वर में आयोजित कार्यक्रम के दौरान बैंक के कार्यपालक निदेशक श्री रवि मेहरा ने ओडिशा राज्य के खाद्य आपूर्ति एवं उपभोक्ता कल्याण विभाग मंत्री माननीय श्री कृष्णा चंद्र पात्रा से विशेष मुलाकात की। मुलाकात के दौरान पंजाब एण्ड सिंध बैंक के विभिन्न कृषि संबंधी योजनाओं तथा राज्य सरकार के विजन "विकसित ओडिशा-2036" में बैंक योजनाओं की भूमिका पर सार्थक विचार-विमर्श हुआ। बैंक के उप महाप्रबंधक श्री हरजीत सिंह संधू, आंचलिक प्रबंधक विजयवाड़ा श्री विनय खंडेलवाल तथा भुवनेश्वर शाखा प्रभारी श्री निर्माण सामल भी बैठक में उपस्थित रहे।

प्रेमचंद की बाल कहानियां

देवेन्द्र कुमार

बच्चे राष्ट्र का भविष्य होते हैं। देश को समृद्धि और विकास की दिशा में अग्रसर करने के लिए वहां के बच्चों का चरित्र-निर्माण और संस्कार अपरिहार्य शर्त है इसलिए भारत में अधिकांश संस्कार बचपन में ही संपन्न करा दिए जाते हैं। बच्चों को सही दिशा दिखाने के उद्देश्य से ही भारत में पंचतंत्र और हितोपदेश जैसे ग्रंथों की रचना की गई। जन्म के समय शिशु अपनी मूलभूत आवश्यकताओं तक सीमित रहता है किंतु आयु में वृद्धि के साथ-साथ उसकी आवश्यकताओं में मनोरंजन भी जुड़ता जाता है, इसमें खिलौने, शारीरिक रूप से खेल जाने वाले खेल के बाद जब बच्चे पढ़ना-लिखना सीखते हैं तो उनके जीवन में साहित्य का अध्याय भी आरंभ होता है। साहित्य का एक पक्ष यह भी है कि वह बच्चों का मनोरंजन व ज्ञानवर्धन करने के साथ-साथ उनके मानसिक विकास और कल्पनाशीलता को भी बढ़ावा देता है। हिंदी साहित्य में बाल साहित्य लेखन की समृद्ध परंपरा रही है जिसे समय-समय पर विभिन्न रचनाकारों में अपनी लेखनी से सिंचित किया है। चूंकि कविताओं व गीतों की पंक्तियां और धुनें बाल-मन को अधिक प्रभावित करती हैं इसलिए बाल साहित्य में बाल-कविता साहित्य विशेष लोकप्रिय है लेकिन जब बच्चे अपेक्षाकृत परिपक्व होने लगते हैं तब पाठन की दृष्टि से कहानियों के प्रति उनकी रुचि बढ़ती जाती है।

हिंदी साहित्य के उपन्यास सम्राट मुंशी प्रेमचंद के साहित्य सागर अनेक बाल-कथा देखने को मिलती है जो मुख्य रूप से ग्रामीण अथवा अर्ध-शहरी परिवेश में लिखा गया है। इसका कारण यह रहा होगा कि अपने कालखंड में परतंत्र भारत को उन्होंने उसी स्वरूप में देखा था। तब तक औद्योगिक क्रांति का भारत में आगमन नहीं हुआ था। नैतिक शिक्षा के उद्देश्य से लिखी गई उनकी अनेक कहानियों को विद्यालयीन पाठ्यक्रम में भी शामिल किया गया। उनकी कुछेक कहानियों को तो टेलीविजन पर नाटक के रूप में प्रसारित भी किया गया है। मुंशी प्रेमचंद की कहानियों को सबसे बड़ा लाभ यह है कि वे मनोरंजक होने के साथ-साथ सकारात्मक सीख दे जाते हैं। ईमानदारी, देशभक्ति, निस्वार्थता, परोपकारिता, चरित्र-निर्माण इत्यादि उनके कहानी के निष्कर्ष के रूप में हमारे समक्ष प्रस्तुत होते हैं जिनके आत्मसात के परिणामस्वरूप बच्चों में श्रेष्ठ व्यक्तित्व का निर्माण हो सकता है। प्रेमचंद की प्रमुख बाल कहानियों में गुल्ली-डंडा, ईदगाह, बालक, दो भाई, कुत्ते की कहानी, दुर्गादास और कलम, तलवार और त्याग इत्यादि प्रमुख है जो बाल-मन के भावों की अभिव्यक्ति करती हैं। उनकी कुछ प्रमुख कृतियां संक्षेप में इस प्रकार हैं -

दो बैलों की कथा : यह झूरी काछी तथा उसके दो बैलों हीरा और मोती की कहानी है। दोनों बैलों में इतनी गहरी मित्रता है कि जिस वक्त दोनों को हल या गाड़ी में जोता जाता, उस समय दोनों की चेष्टा होती कि ज्यादा से ज्यादा बोझ उसकी ही गर्दन पर रहे। झूरी भी अपने बैलों से बड़ा स्नेह करता है। एक बार झूरी ने दोनों बैलों को साले गया के पास ससुराल भेज दिया। रात को जब सारा गांव सो गया तो दोनों बैल पगहे तोड़कर वापस झूरी के पास आ गए। दूसरे दिन झूरी का साला फिर आया और वापस उन्हें अपने साथ ले गया। अबकी बार दोनों को मोटी रस्सियों से बांधा गया और पुराने शरारत का मजा भी चखाया गया। यहां एक लड़की होती है जो रोज उन दोनों बैलों को दो रोटियां दे जाती। एक दिन वही लड़की उन दोनों बैलों की रस्सी खोल देती है और उन्हें वहां से भागने में मदद करती है। अंत में दोनों बैल कांजीहौस पहुंच जाते हैं जहां उनकी

नीलामी होती है, वहां से खरीदकर ले जाने के दौरान संयोग से वे अपने मालिक झूरी के पास पहुंच जाते है। इस कहानी में झूरी का उन दोनों बैलों के साथ स्नेह, हीरा और मोती के मध्य गहरी मित्रता तथा एक लड़की का निश्छल मन दिखाया गया है जो बाल-मन को सहसा प्रभावित करता है।

बूढ़ी काकी : यह कहानी बूढ़ी काकी पर केंद्रित है। बूढ़ी काकी, अपनी सारी संपत्ति भतीजे पंडित बुद्धिराम के नाम कर देती है। जब तक संपत्ति भतीजे के नाम नहीं लिखी गई होती, तब तक पंडित बुद्धिराम और उनकी पत्नी रूपा, काकी की खूब सेवा-सत्कार करते, उनसे तरह-तरह से वादे करते लेकिन संपत्ति लिख जाने के बाद काकी को भरपेट भोजन नसीब न होता। केवल पंडित बुद्धिराम की बेटी ही काकी से स्नेह करती। एक दिन बुद्धिराम के बड़े बेटे सुखराम का तिलक उत्सव हो रहा था जिसके लिए बने व्यंजन के स्वाद की चाह में बूढ़ी काकी बार-बार अपने बंद कमरे से बाहर आ जाती। उनका यह दुस्साहस पंडित बुद्धिराम और उनकी पत्नी रूपा को पसंद नहीं आया, उन्होंने काकी को उनके कमरे में बंद कर दिया। उनकी सजा यह थी कि तिलक उत्सव में मेहमानों को तो खाना खिलाया गया लेकिन उन्हें उस रात खाना नहीं नसीब हुआ। पंडित बुद्धिराम की बेटी ने अपने हिस्से की पूड़ियां काकी के लिए बचाकर रखे थे। सबके सो जाने के बाद लाडली ने उन्हें पूड़ी दी लेकिन जब उन पूड़ियों से उनका पेट नहीं भरा तो काकी उसके साथ मेहमानों के जूठे पत्तल के पास चली गई और पत्तलों में से बचा हुआ खाना खाने लगी। रूपा की नींद खुली तो उसे इस दृश्य ने झकझोर दिया, उसका हृदय परिवर्तन हो गया। उसने काकी से अपने कर्मों की क्षमा याचना की और एक बड़ी थाली में भंडार में से सभी सामग्रियां लाकर दी। पारिवारिक मूल्यों के साथ यह कहानी बच्चों को कृतघ्नता के प्रति हमें सचेत करती है।

गुल्ली-डंडा : इसमें कथावाचक और उसके दोस्तों गया, मतई, मोहन, दुर्गा का जिक्र है जिसमें कथावाचक और गया ही सभी जगह नजर आते हैं। भारतीय खेल गुल्ली-डंडा के माध्यम से कहानी आगे बढ़ती है। बचपन में गया, गुल्ली-डंडा खेल में प्रवीण होता है तथा वह कथावाचक को बार-बार पदाता है। कथावाचक के पिता थानेदार हैं इसलिए उनका तबादला किसी शहर में हो जाता है। कथावाचक पढ़-लिखकर इंजीनियर हो जाता है। जिले का दौरा

करते हुए उसी कस्बे में पहुंचता है जहां उनकी मुलाकात गया से होती है। बचपन की स्मृतियों को ताजा करने के लिए वे गया के साथ फिर से गुल्ली-डंडा खेलते हैं लेकिन इस बार गया बार-बार पदता है और कथावाचक की बेइमानी पर भी गया कुछ नहीं बोलता। दिन के अंत में गया, कथावाचक से कहता है कि कल गुल्ली-डंडा की प्रतियोगिता है जिसमें सभी पुराने खिलाड़ी आएंगे, आप भी देखने आएं। निर्धारित समय पर सभी खिलाड़ी पहुंच जाते हैं, कथावाचक केवल खेल देखकर पुराने दिनों का आनंद लेता है। खेल आरंभ होता है। गया, पुराने दिनों की तरह अपना हुनर दिखाना शुरु करता है तो उसे देखकर कथावाचक को अपनी हीनता का अहसास होता है। वास्तव में एक दिन पूर्व गया केवल खेलने का दिखावा कर रहा था। कथावाचक को इसकी अनुभूति होती है कि बचपन में किसी प्रकार का भेदभाव नहीं होता लेकिन बड़े होने पर सामाजिक स्थिति का प्रभाव संबंधों पर पड़ता है। सच्ची मित्रता और मानवता सामाजिक सीमाओं से ऊपर होती है।

ईदगाह : चार वर्ष का बच्चा हामिद, अपनी दादी अमीना के साथ रहता है। उसके माता-पिता का देहांत हो गया है लेकिन उसकी दादी उससे यह बात छिपाती है। एक ईद की सुबह हामिद, गांव के अन्य बच्चों के साथ ईदगाह के लिए निकलता है। त्यौहार के ईदी के रूप में उसे केवल तीन पैसे मिले हैं। बाकी बच्चे अपने ईदी को खाने और खिलौनों पर खर्च करते हैं लेकिन हामिद अपने प्रलोभन पर नियंत्रण पा लेता है। जब उसे दुकान में चिमटा दिखता है तो उसे याद आता है कि खाना बनाते वक्त उसकी दादी की उंगलियाँ अक्सर जल जाती है और वह अपने पैसे से उनके लिए चिमटा खरीदता है।

शेष अंश पृष्ठ संख्या 27 पर

संसदीय राजभाषा समिति का कोलकाता दौरा

संसदीय राजभाषा समिति की तीसरी उप समिति ने दिसंबर, 2025 माह में अपने कोलकाता दौरे के दौरान 23 दिसंबर, 2025 को बैंक के आंचलिक कार्यालय कोलकाता का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया। माननीय समिति सदस्यों में श्री सतीश कुमार गौतम, श्री टी. एम. सेल्वागणपति, श्री ज्योतिर्मय सिंह महतो, श्री ओमप्रकाश राजेनिंबालकर, श्री ईरण्ण कड़ाड़ी, श्री नीरज डाँगी और श्रीमती संगीता यादव की गरिमामय उपस्थिति रही।

बैंक की दृष्टि से यह निरीक्षण उत्कृष्ट रहा। समिति सदस्यों ने बैंक में किए जा रहे राजभाषा कार्यान्वयन को रेखांकित किया तथा अपेक्षाकृत बेहतर परिणामों के लिए बैंक को अनेक महत्वपूर्ण सुझाव भी दिए।

संसदीय राजभाषा समिति का कोलकाता दौरा

निरीक्षण कार्यक्रम में वित्तीय सेवाएं विभाग की ओर से उप सचिव श्री धीरज भास्कर, उप निदेशक (राजभाषा) श्री धर्मबीर तथा बैंक की ओर से महाप्रबंधक सह मुख्य राजभाषा अधिकारी श्री गजराज देवी सिंह ठाकुर, आंचलिक प्रबंधक कोलकाता श्री समिन्दर सिंह, मुख्य प्रबंधक (राजभाषा) श्री निखिल शर्मा और आंचलिक कार्यालय कोलकाता में पदस्थ राजभाषा अधिकारी श्री रवि यादव ने सहभागिता की। निरीक्षण पश्चात समिति सदस्यों ने बैंक द्वारा लगाए गए राजभाषा प्रदर्शनी का भी अवलोकन किया।

बाजारवाद और हम

उपेन्द्र कुमार सिन्हा

आर्थिक उदारीकरण ने भारतवर्ष में कुछेक शब्दों को, जो अब तक अमर्यादित माने जाते थे, एक उच्चता प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वैसे इन शब्दों के प्रयोग में अभी भी थोड़ा संयम बरतना पड़ता है क्योंकि अतीत में इन शब्दों में प्रच्छन्न गाली अभी भी विस्मृत नहीं हो सका है। ऐसे अनेक शब्दों में एक है बाजारवाद। बाजारवाद से जुड़े भाव का एक अपरूप है बाजारू। आश्वस्त रहिए बाजारवाद की भूमिका और महिमा जितना श्लाघ्य है, बाजारू होना उतनी ही हीनता का द्योतक है। अब यह अतीत का प्रभाव है कि इस शब्द को अपशब्द की श्रेणी में ही माना जाता है। आप किसी को बाजारू कह दीजिए और संभव है कि इस शब्द के प्रतिरोध में सामने वाला व्यक्ति शारीरिक क्षति पहुंचा दे। अगर यह शब्द किसी स्त्री के लिए कह दिया तो थाना-पुलिस की नौबत आ सकती है। बाजारीकरण के हिमायती भी अपने आपको बाजारू कहलाना पसंद नहीं करेंगे। बाजारीकरण का अर्थ है बेचने-खरीदने की स्वतंत्रता। अपने देश में अफसर से लेकर चपरासी तक, नौकर शाह, नेता जो बिकने को तत्पर हैं पर बाजारू कहलाना नहीं चाहते जबकि बाजारू हो जाने से मूल्य में संवर्धन होता है।

यदि मांग-पूर्ति के सिद्धांत को समझा जाए तो बिकने वाले असंख्य हैं और खरीदने वाले अल्प और नियमानुसार बिकने वाले के अवमूल्यन की यही वजह है। फिर भी बहुत कुछ ऐसा है जिसने अपने मूल्य को बढ़ाया है। यथा नैतिकता महंगा है और यदि कोई सच्चरित्र, नैतिक मूल्यों का, सामाजिक आदर्श का और सत्य का पक्षधर हो तो उसकी कीमत ऊंची लगाई जाएगी। कारण वही मांग-पूर्ति का बेमेल होना। पूर्ति इतनी कम है कि आप ऐसे सद्गुणों को अनमोल ही समझिए। वैसे ध्यान देने वाली बात है कि इन सद्गुणों की मांग भी कुछ खास नहीं है। तथापि जो थोड़े बहुत क्रेता है भी, दिलदार हैं, ऊंचे मूल्य चुकाने को तैयार क्योंकि अंतिम उद्देश्य है इन सद्गुणों को खरीदकर, इसे गोदाम में बंद कर दिया जाए ताकि सामान्य बाजारीकरण में अवरोध समाप्त हो जाए और जो कुछ बचे वह बाजारू तो बन ही जाते।

दूसरा महत्वपूर्ण शब्द है प्रतियोगिता। यह मान लिया गया है कि मात्र प्रतियोगितात्मक शक्ति ही श्रेष्ठता को स्थापित कर सकती है। जो प्रतियोगी नहीं है, समाज के लिए तुच्छ है और व्यवस्था के लिए अस्पृश्य। प्रतियोगी क्षमता के निर्धारण के लिए अलग-अलग क्षेत्रों में अलग-अलग मापदंड हैं। कहीं लिखित मौखिक परीक्षा तय करती है तो कहीं ऊंची कुर्सियों तक पहुंच तो कहीं मिथ्याचार में प्रवीणता और कहीं-कहीं अनैतिक समझौते भी प्रतियोगी क्षमता को स्थापित करती है। दुनिया छोटी हो गई है, वैश्विक गांव पर किसी आदर्श समाज की भांति नहीं जिसमें हर वर्ग के लिए मानवीय मूल्यों और सुविधाओं के साथ जीवन जीने के अवसर हों बल्कि एक बाजार की तरह जहां मिलावटी घी और शुद्ध घी दोनों के क्रेता व विक्रेता है और मजेदार बात यह है कि मिलावटी वाला बाजारी प्रतिस्पर्धा में अग्रसर होगा।

पूर्व काल में एक व्यक्ति अपनी इच्छा से, शौक से या फिर जरूरत से सामान खरीदता था। कोई भी सामान हो, गाड़ी, मोटर-साइकिल, कुर्सी, मेज, फ्रिज, टीवी, साइकिल, बर्तन-बासन कुछ भी, अनिवार्यता के दृष्टिकोण से खरीदता था और खरीदने के बाद जब वस्तु घर में आ गई तो फिर उन वस्तुओं से स्नेह का संबंध बन जाता था। चीजों को संभालना, उनसे वैसे ही प्रेम करना जैसे घर के जीवित सदस्यों के साथ होता था। कहा जाए तो भौतिक वस्तुओं को भी घर का सदस्य ही मानता था। एक प्याला भी टूटे तो चोट पहुंचती थी। मात्र नुकसान

के कारण नहीं, विछोह का भाव भी निहित होता था। बदलते समय में बाजारीकरण के साथ ही उस नैसर्गिक भाव का क्षरण हो गया है। अब चीजें इसलिए नहीं खरीदी जाती कि उसकी आवश्यकता है। अब आपके जेब से आपकी गाढ़ी कमाई निकालने के लिए छल और छद्म का सहारा लिया जा रहा है।

प्रचार और विज्ञापन ने, आपसी प्रतिस्पर्धा ने आपकी जरूरत को बाजार के अनुसार डालने की प्रवृत्ति स्थापित की है। आपकी इच्छा, शौक अनिवार्यता पृष्ठभूमि में चली गई है और बाजार आपकी जरूरतों को परिभाषित करने लगा है। आपको मस्तिष्क का यह कोना अब बाजार द्वारा नियंत्रित कर लिया गया है और सामान खरीदने की जगह सामान इकट्ठा किया जाने लगा है। इस बेतरतीब खरीदी का दुष्प्रभाव यह है कि वह स्नेह और प्रेम जो हमारे घर के संस्कार में भौतिक वस्तुओं के प्रति होता था, अब तिरोहित होने लगा है। घर में, घर की आवश्यकता के अनुसार फ्रिज और टीवी हैं लेकिन अब नए-नए मॉडल के प्रति आकर्षण बढ़ा है। पुरानी चीजों के प्रति मोह छोड़िए, सामान्य शिष्टाचार भी समाप्त हो गया है। नया मॉडल आ गया है तो पुरानी चीज को पूरी धृष्टता से बाहर कर दिया जाता है, जरूरत मॉडल द्वारा तय किया जा रहा है। ईएमआई की सुविधा ने इस बाजार को भयानक गति प्रदान कर दी है। अब प्रेम और स्नेह जैसे भाव समाप्त हो चुके हैं क्योंकि घर के साजों-सामान भी प्रतियोगिता या फिर प्रतिद्वंद्वी भाव से खरीदे जा रहे हैं तथा यह जीवन में कशमकश को और भी आंदोलित कर रहा है। कोई नई चीज लाकर भी आत्म संतुष्टि नहीं होती क्योंकि बाजार में अनगिनत चीजें हैं और लोलुप मन भी कभी संतुष्ट हो सका है? पहले एक घर में फ्रिज आया तो अड़ोस-पड़ोस को ठंडा पानी, बर्फ आदि का जुगाड़ मिल जाता था। एक घर में कार आया तो अगर-बगल आश्वस्त होता था कि गाहे-बगाहे कार की आवश्यकता पूरी हो जाएगी। यह विश्वास एवं सौहार्द को बढ़ाता था और खरीदने वाला व्यक्ति इस भाव से प्रफुल्लित होता था कि वह एक सामाजिक दायित्व पूरा कर रहा है। पड़ोसियों में प्रतिस्पर्धा नहीं सहयोग की भावना मजबूत होती थी। आज के बाजारवाद में एक पड़ोसी ने फ्रिज या गाड़ी खरीदी तो दूसरे के लिए आवश्यक हो जाता है कि ईंट का जवाब पत्थर से दे। वह और महंगी गाड़ी खरीदेगा, बेहतर मॉडल की ओर जाएगा और इस प्रतियोगिता के फलस्वरूप उसे ऋण लेना पड़े तो कोई बात नहीं, पड़ोसी को परास्त कर देने की आत्म मुग्धता बड़ी उपलब्धि

मानी जाती है। बरसो से जिस सामाजिक ताने-बाने को हमने धरोहर माना और एक-दूसरे पर अधिकार को मान्यता दी थी, बाजारवाद ने उसे छिन्न-भिन्न कर दिया है।

बाजारवादियों का मानना है कि इस तरह के खुलेपन से नागरिक जीवन और व्यवस्थित होगा, अभाव दूर होंगे, परस्पर प्रतिस्पर्धा से सामान उचित मूल्य पर मिलेंगे, बाजार के नए-नए स्वरूप उभरेंगे जो उपभोक्ताओं को सहूलियत प्रदान करेंगे। इलेक्ट्रॉनिक बाजार जिसे लोकप्रिय भाषा में ई-बाजार कहते हैं, ने कुछ बाजारी संस्कारों को निगल लिया है। पहले बाजार जाकर चीजों की पड़ताल की जाती थी, मोल-भाव किए जाये थे, बेहतर सामग्री के लिए आग्रह होता था क्योंकि कमाई को श्रेष्ठतम वस्तुओं के लिए व्यय करने का आंतरिक भाव होता था। आज के ई-बाजार में इसे प्रलोभन के माध्यम से संचालित किया जाता है, एक पर एक मुफ्त बेचना ताकि व्यक्ति के अंदर सुषुप्त लालच को हवा देकर उसे कैसा भी सामान बेच दिया जाए। सामान्य गुणवत्ता की चीजों का ऐसा प्रस्तुतिकरण कि आवश्यकता हो न हो, ऐसी नायाब चीज को छोड़ कैसे सकते हैं, जेब पर भारी पड़ता है।

बाजारवाद के या फिर बाजारू संस्कृति के पैरोकार बाजे-गाजे के साथ एलान करते हैं कि यह जीवन को सरल और समृद्ध बना देगा, योग्यता को सम्मान देगा, खुशहाली और उपभोग के लिए विस्तारित अवसर प्रदान करेगा। पूंजीवाद का स्वर्णिम नियम है कि व्यक्ति इस व्यवस्था में आजादी से अपने चयन को प्रकट कर सकता है। बड़े से बड़े पूंजीपति को अंतिम उपभोक्ता के चरण पर गिरना पड़ता है क्योंकि जो उपभोक्ता की रुचि होगी, वहीं बनाया जाएगा,

बेचा जाएगा, उसी से लाभ कमाया जा सकेगा। पूंजीपति के निर्णय उपभोक्ता की पसंद और नापसंद पर निर्भर होगा। समाजवाद सार्वभौमिक रुचि के अनुसार व्यवस्थित होता है जहां व्यक्तिगत रुचि की अनदेखी करते हुए उसे सार्वभौमिक पसंद के लिए त्याग करना ही पड़ता है। सैद्धांतिक तौर पर यह नियम प्रभावी जान पड़ता है लेकिन यह इस तथ्य को छिपा लेता है कि पूंजी की शक्ति, व्यक्ति की रुचि को ही प्रभावित करते हुए उसे वही सोचने और खरीदने के लिए बाध्य कर देता है जो पूंजीपति चाहता है और यहीं से प्रारंभ होता है व्यक्ति की परतंत्रता की इबारत लिखना। आपके मस्तिष्क को भ्रम और विज्ञापन के सहारे स्वतंत्रता से प्रकटित होने ही नहीं देता। यह प्रारंभ में धीमे-धीमे चलता है और एक बार शिकंजे में कसने के बाद किसी झंझावात की तरह व्यक्ति विशेष की सोच की स्थिरता को ही नष्ट-भ्रष्ट कर देता है।

भौगोलिक दृष्टिकोण से विश्व का जो भी आकार हो, विभिन्न भागों में रहने वाले लोगों की परंपरा, जीवन-शैली और मान्यताएं अलग-अलग हों, बाजारवाद एक ऐसा वातावरण तैयार कर देता है कि इसका दंश और प्रभाव समान रूप से प्रभावी होता है तथा बाजारवाद को यह धार मिली है सूचना क्रांति और सूचनाओं के विस्फोट के कारण। आप अपनी परंपरा, संस्कृति तक सीमित रह ही नहीं सकते और जब संस्कृति का विस्तार होता है तभी बाजारवादियों की चहल-पहल शुरू होती है।

बाजारू होना अर्थात बिक जाने के लिए उपलब्ध। मनुष्य के संदर्भ में बिक जाना एक श्राप की तरह है क्योंकि इसका शारीरिक, मानसिक व भावनात्मक प्रभाव, मनुष्य को उसकी सबसे बड़ी विशेषता, उसके दिमाग को कुंद कर देता है और फिर ऐसा माहौल बन जाता है कि एक बहाव में पूरी जाति बहती रहती है जिसमें स्व के अतिरिक्त कुछ नहीं दिखता या समझ नहीं आता है। भारतीय परिवेश में परोपकार, सहयोग, दया भावना, स्वतंत्रता, निर्द्वंद्व अभिव्यक्ति को आदि काल से महत्व दिया गया है तथा इसके मूल सिद्धांत, आस्था और अध्यात्म से अभिप्रेरित हैं। दूसरे, भारतीय समाज की गतिशीलता भी इन दिव्य भावों पर आधारित है। ऐसी परिस्थिति में विचार के स्तर पर बाजारीकरण समाज के लय को ऐसी दिशा में मोड़ सकता है जो मौलिक और विरासत में मिले संस्कारों से अनायास प्रतियोगिता करने लगते हैं जिसका प्रतिफल है एक दिशाहीन समाज, जो अपनी जड़ से ही दूर हो जाता है।

बाजारू होना सिर्फ स्वार्थ की पूर्ति को उद्देश्य बनाकर भारतीयता के ठोस धरातल को ही हिला देगा। अंधानुकरण, मनुष्य की सृजन क्षमता को मृतप्राय कर देता है और फिर हमारे पास अगली पीढ़ी के लिए विरासत में सौंपे जाने वाले मूल्य में कुछ भी विशिष्ट न रह कर एक भेड़चाल शेष रह जाएगा। आवश्यकता है कि इस मर्ज का समय रहते निदान कर लिया जाए। बड़ी बात यह है कि यह मानते हुए कि बाजारवाद अब स्थाई हो चुका है और हमारी परिस्थिति के साथ घुल-मिल चुका है, इसका प्रतिरोध करना बेमानी है। आवश्यकता है इसी व्यवस्था में हमारे मूल्यों को पिरोते हुए इसे ऐसे परिवर्तित किया जाए कि इसका लाभ पक्ष तो अक्षुण्ण रहे पर इसके दुष्प्रभाव सीमित रहें।

समाजशास्त्र बताता है कि समाज निर्माण की प्रक्रिया में सर्वाधिक महत्वपूर्ण सामाजिक इकाइयों की परस्पर निर्भरता के मूल तत्व को रेखांकित करना था ताकि व्यक्तिगत ऊर्जा को सामूहिक ऊर्जा में समाहित करते हुए एक मजबूत गतिशील व्यवस्था बने तथा वह व्यवस्था अपनी समस्याओं का निराकरण कर सके और सामाजिक उत्थान के साथ-साथ समाज से जुड़े सभी इकाइयों की प्रगति प्रशस्त हो सके। यहां व्यक्ति महत्वपूर्ण है और समाज भी उतना ही महत्वपूर्ण है। बाजारवाद आधारित समाज प्रमुख रूप से ऐसी व्यवस्था का हिमायती होता है जिसमें समाज के कतिपय प्रभावशाली लोगों के लिए अवसर उपलब्ध हो और शेष इकाइयां उन प्रभावशाली लोगों का अनुसरण करें। इसी तरह मानवीय जरूरतों को भी उन्हीं महत्वपूर्ण लोगों की जरूरत के संदर्भ में समझा जाता

है और बुनियादी आवश्यकताओं के अधीनस्थ मान लिया जाता है। इस व्यवस्था में रोटी की जगह केक को सजा कर रखा जाता है और रोटी को महत्व देने के लिए उसकी कीमत भी बढ़ा दी जाती है। शिक्षा का उद्देश्य है स्वस्थ, समझदार, विवेकी नागरिकों को पोषित करना। इसके लिए समर्पित विद्वान शिक्षक, आदर्श वातावरण की आवश्यकता होती है जो विद्यार्थी को स्वावलंबन के लिए तैयार करें, उनकी सृजनशीलता को प्रोत्साहित करें और सभी छात्रों में सहयोग की भावना को विकसित करें।

बाजारवाद के प्रभाव में शिक्षा मंदिर की जगह अब बड़े भव्य मकान, वातानुकूलित कक्षा इत्यादि खड़े हुए नजर आने लगे हैं। आधुनिक सुविधाओं से सज्जित विद्यालय में स्वावलंबन का पाठ बेमानी है और जब सब कुछ सहज उपलब्ध हो तो फिर सृजनशीलता का कोई अर्थ नहीं रहता। सर्वांगीण विकास के नाम पर अलग-अलग छात्रों की अभिरुचि को चिह्नित किए बिना सभी विद्यार्थियों को विभिन्न क्षेत्रों में ढकेल देने से शिक्षा का मूल भाव ही समाप्त हो जाता है। बड़े लोगों की रुचि के अनुसार तैयार और फैलते ऐसे विद्यालयों को ही आदर्श की संज्ञा दी जाती है लेकिन शिक्षा का प्रभार इतना अधिक होगा कि समाज का एक बड़ा वंचित भाग इन विद्यालयों में प्रवेश ही नहीं ले पाएगा और शिक्षा के स्तर पर सामाजिक विभाजन समाज में एक व्यतिक्रम पैदा कर देगा। बाजारवाद अपनी उच्चता पर आत्म-मुग्ध होता रहेगा और समाज विघटन का शिकार।

इन्हीं संदर्भों में बाजारू शब्द को सही दृष्टि से देखा नहीं जाता क्योंकि यह मानवता की अस्मिता को बाज़ार की वस्तु बना देता है। इच्छा, ज़रूरत और यहां तक कि व्यक्ति स्वयं में व्यक्तिगत होता है और उसका प्रकटीकरण भी उसकी अपनी इच्छा से नियंत्रित होना चाहिए। कोई बाहरी तत्व उसी सीमा तक किसी व्यक्ति के जीवन में प्रवेश कर सकता है जहां तक अनुमति हो। इसके लिए व्यक्ति को संयमित और सजग रहना होगा। अनाधिकार प्रवेश के प्रतिरोध से ही स्वाभिमान और स्वत्व की रक्षा करते हुए बाजारवाद के युग में बाज़ारू बनने से बचा जा सकता हैं।

-वरिष्ठ प्रबंधक
आंचलिक कार्यालय भोपाल

पृष्ठ संख्या 21 का शेष अंश

घर आकर हामिद अपनी दादी को वह चिमटा उपहार स्वरूप देता है। इस पर दादी फूट-फूटकर रोती है और अपने पोते को आशीर्वाद देती है। बालक के चरित्र के माध्यम से प्रेमचंद यह बताते हैं कि भौतिक संपत्ति का अभाव हो सकता है, लेकिन यदि मन में संवेदनशीलता हो तो समाज के सभी वर्गों से ऊपर उठा जा सकता है।

मुंशी प्रेमचंद ने बड़ों के लिए विपुल कथा-संसार की रचना करने के साथ-साथ बच्चों के लिए भी विशेष रूप से लिखा। कहानियां ऐसी जो सार्थक हो, सीख देने वाली हो, बच्चों में नैतिक मूल्य स्थापित करती हों और उनमें साहस का संचार करती हों। इनका कालखंड ऐसा था जब अंग्रेजी भाषा और अंग्रेजी संस्कृति के दुष्प्रभाव के कारण भारतीय समाज दुविधा की स्थिति में था। भारतीय समाज और सभ्यता को अक्षुण्ण रखने के साथ-साथ विश्व में विज्ञान की प्रगति और अनुसंधान में सामंजस्य बनाना चुनौतीपूर्ण हो रहा था। इन दिनों में प्रेमचंद ने जो कहानियां लिखी वे बच्चों में साहस, नैतिकता और उनके आत्म स्वाभिमान के लिए सार्थक सिद्ध हुई। उनका मानना था कि बच्चों को ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जिससे वे स्वयं अपनी रक्षा कर सकें। बालकों में इतना विवेक होना चाहिए कि वे प्रत्येक कार्य के गुण-दोषों को अपने भीतर की आंखों से देख सके। भारत में बाल साहित्य लेखन की परंपरा बहुत पहले से चली आ रही है। हिंदी से पूर्व भी संस्कृत में बाल साहित्य लिखा गया था। बाल साहित्य ने जहां एक ओर बाल-मन की मुखर अभिव्यक्ति की वहीं दूसरी ओर इसने उनके यथार्थता से भी उनका परिचय कराया। भले ही बाल साहित्य लेखन परंपरा में समय के साथ परिवर्तन हो रहे हैं लेकिन बच्चों के सर्वांगीण विकास के लक्ष्य पूर्ति के लिए इसे अपरिहार्य माना जाना चाहिए।

-वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा)
प्रधान कार्यालय राजभाषा विभाग

काव्य-मंजूषा

मुझे मेरे शरारती दोस्त चाहिए

मुझे मेरे जैसे शरारती दोस्त चाहिए।
समझदारों से मेरी निभती ही नहीं
बनावटी लोगों से मेरी पटती ही नहीं
दिमाग से चलने वाले से दोस्ती चलती नहीं
थोड़े नादान दोस्त चाहिए
जो करते रहते हों
थोड़ी बेवकूफियां और गलतियां
थोड़ी नोक-झोंक और बदमाशियां।

जो टांगें मेरी खींचें, मुझे हवा में ना उड़ने दें
लेकिन कभी भी जमीं पर ना बिखरने दें
जो मेरे दिल की बात सुने दिल खोलकर
और अपने दिल की बातें भी मुझे सुना दे जी भर के
जो मेरे जज़्बातों को बिना कहे समझ ले
मुझे दिल के अनमोल दोस्त चाहिए।

जिसके सामने होंठों की हँसी रुके ही नहीं
और दुख मेरे कभी भी टिके ही नहीं,
उम्र की लकीरें जो मेरे जेहन से मिटा दे
मुझे मेरे ऐसे बेफिक्री से जीने वाले
जिन्दा दिल दोस्त चाहिए।

-स्वाती गुप्ता
प्रबंधक
आंचलिक कार्यालय लखनऊ

देह के निशान

कविताओं ने छोड़ रखे है
कुछ निशान, गहरे निशान
इनके दुख फैले हुए है
मेरी देह भर में
मैंने कविताओं से प्यार किया
मैंने उन्हें करीब पाया
इतने करीब कि
मैं सुन सकता हूं
उनकी सांसे
सूंघ सकता हूं
उनके पसीने की महक
मेरी देह पर पड़े हुए
लाल नीले निशान
ये किसी हारी हुई लड़ाई के नहीं है
और ना ही किसी साम्राज्य को बचाते हुए
दुश्मन के भाले के
ये तो बस दुख है
मुझे छोड़ कर गई हुई कविताओं के।

-संजीव कनौजिया
अधिकारी
प्रधान कार्यालय ऋण निगरानी विभाग,
नई दिल्ली

ग़ज़लें

जब से शहर में, आया छोटू
घर को, लौट न पाया छोटू

अच्छा-ख़ासा, नाम था उसका
सबने मगर, बुलाया छोटू

राजा बेटा था जो, घर में
बाहर वो, कहलाया छोटू

चौका-बर्तन, झाड़ू-पौंछा
इनसे, निकल न पाया छोटू

भीतर ही भीतर, घुलता था
खुल कर कब, हँस पाया छोटू

सबकी सुन कर, हँस देता है
ऐसा माँ का जाया छोटू

कोई, सिर पर हाथ न धरता
कैसी क़िस्मत, लाया छोटू

रात सुनते हैं, मर गया हरिया
पार आख़िर, उतर गया हरिया

भूख, बेचारगी, ग़रीबी, दुःख
नाम बच्चों के, कर गया हरिया

बोझ बच्चों का, कर्ज़ बनिये का
सर पे बीवी के, धर गया हरिया

दुःख के अन्धड़ से, कब तक लड़ता
सूखे पत्ते सा, झर गया हरिया

डाँट, दुत्कार, ग़ालियाँ पाईं
काम पाने, जिधर गया हरिया

हो के मजबूर, रेत की मानिंद
ज़र्रा-ज़र्रा, बिखर गया हरिया

लोग कहते हैं, ख़ुदकुशी की है
सच तो ये है, कि तर गया हरिया

-डॉ. चरनजीत सिंह
सेवानिवृत्त मुख्य प्रबंधक (राजभाषा)

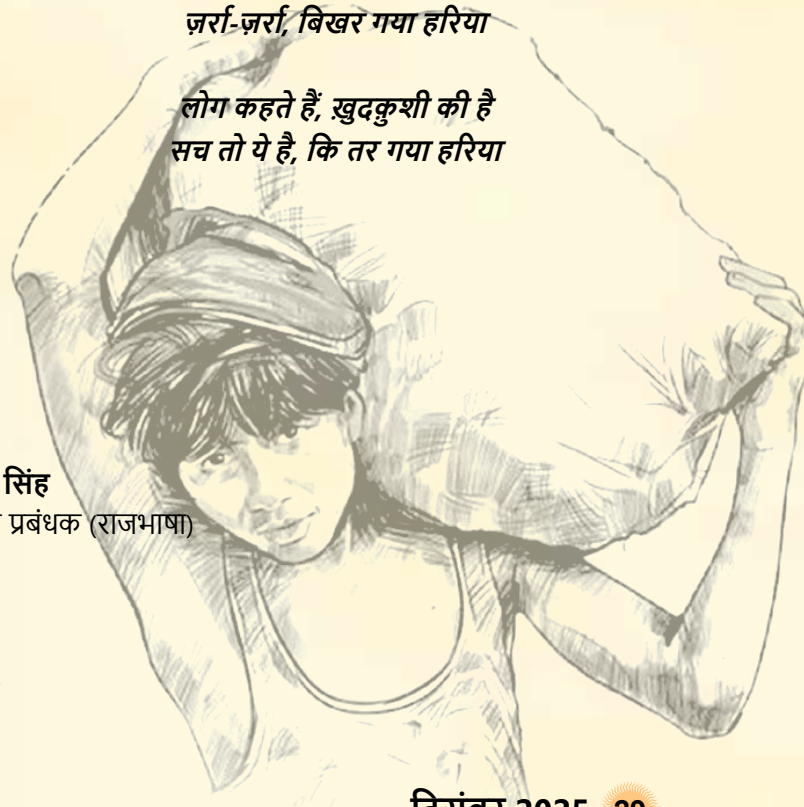

दिल्ली बैंक नराकास पुरस्कार

*पंजाब एण्ड सिंध बैंक, प्रधान कार्यालय को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, दिल्ली (बैंक) से विभिन्न श्रेणियों में कुल 03 पुरस्कार प्राप्त हुए। इसके अंतर्गत राजभाषा कार्यान्वयन के लिए राजभाषा शील्ड प्रतियोगिता 2024-25 में **द्वितीय**, बैंक की हिंदी तिमाही पत्रिका 'राजभाषा अंकुर' के लिए **प्रथम** तथा ई-पत्रिका राजदीप के लिए ई-पत्रिका श्रेणी में **तृतीय पुरस्कार** प्रदान किया गया। यह पुरस्कार 22 दिसंबर, 2025 को आयोजित दिल्ली नराकास के वार्षिक समारोह एवं 63वीं छमाही बैठक में प्रदान किया गया। बैंक की ओर से महाप्रबंधक श्री अशनी कुमार, आंचलिक प्रबंधक दिल्ली-II श्री पवन कुमार भाठिया तथा मुख्य प्रबंधक सुश्री कुमुद ढल ने उक्त पुरस्कार ग्रहण किए।*

दिल्ली बैंक नराकास पुरस्कार

नराकास के तत्वाधान में आयोजित अन्य प्रतियोगिताओं में भी बैंक को पुरस्कार प्राप्त हुए।

बेटा, डर मत! ये बैंक वाले अंकल है।

रवि रेगर

जब मैंने पहली बार बैंक की नौकरी शुरू की थी, तब मेरे मन में एक अलग ही उत्सुकता थी। नई जगह, नए लोग और ज़िम्मेदारियों का बोझ। मैं सोच रहा था कि यह काम कितना चुनौतीपूर्ण होगा। हर दिन अलग-अलग ग्राहक, उनकी परेशानियां और उनके सवाल। उस समय मुझे अंदाज़ा नहीं था कि यह नौकरी मुझे सिर्फ बैंकिंग नहीं, बल्कि ज़िंदगी का असली मतलब भी सिखाएगी।

शुरुआत में सब कुछ बहुत नया और अलग था। शहर के चमक-दमक से दूर मैं एक बार ग्रामीण शाखा में पदस्थ हुआ था। यहाँ की दुनिया अलग थी। लोग सीधे-सादे थे लेकिन उनकी ज़रूरतें और सपने बहुत बड़े थे। कोई किसान दिनभर खेत में काम करके अपने पसीने की कमाई लेकर आता और सावधानी से जमा करता। कोई बुज़ुर्ग अपनी पेंशन लेने के लिए लाइन में खड़ा रहता। कई लोग तो पहली बार बैंक की दहलीज़ पार कर रहे थे। उनकी आँखों में डर था लेकिन साथ में उम्मीद भी। धीरे-धीरे मुझे समझ आया कि बैंक उनके लिए सिर्फ़ एक इमारत नहीं है, यह उनके सपनों और भविष्य की तिजोरी है।

इसी दौरान एक दिन दोपहर में जब शाखा थोड़ी खाली थी, एक दंपत्ति बैंक में आया। कपड़े साधारण, चेहरे थके हुए लेकिन आंखों में अपनापन और विश्वास था। उन्होंने मुझसे कहा, "साहब, हमारी बेटी का खाता खुलवाना है।" मैंने उन्हें मुस्कुराकर बैठाया और अकाउंट खोलने के कागज़ात तैयार किए। जैसे ही प्रक्रिया शुरू हुई, मेरी नज़र उनकी बेटी पर पड़ी। वो ग्यारह साल की एक नन्ही बच्ची थी। माँ के आंचल को कसकर पकड़े हुए, जैसे पूरी दुनिया से छिपना

चाहती हो। चेहरा बहुत प्यारा था लेकिन उसकी आँखों में डर और झिझक साफ़ दिखाई दे रही थी। मैंने हल्की मुस्कान के साथ पूछा, "बेटा, तुम्हारा नाम क्या है?" बच्ची और भी ज़्यादा माँ के पीछे छिप गई। कोई उत्तर नहीं। मैंने उसकी माँ से धीरे से पूछा, "क्या हुआ? इतनी डरी-सहमी क्यों है?"

माँ ने धीमी आवाज़ में कहा, "साहब... यह जन्म से अंधी है। देख नहीं सकती।" यह सुनकर मैं कुछ पल के लिए बिल्कुल चुप रह गया। मेरे दिल पर जैसे किसी ने बोझ रख दिया हो। इतनी मासूम बच्ची जिसने कभी सूरज की रोशनी नहीं देखी, फूलों का रंग नहीं जाना, अपने माँ-बाप का चेहरा तक नहीं देखा। मेरे मुँह से निकला, "जब यह खुद खाता चला ही नहीं पाएगी, तो खाता क्यों खुलवा रहे हैं?"

उसके पिता ने लंबी साँस लेकर कहा, "साहब, हमारे रिश्तेदार इसे बोझ मानते हैं, किसी ने मदद नहीं की। हम ही इसका सहारा हैं।

अगर हम पर कुछ हो गया तो कम से कम इसके नाम पर कुछ पैसे होंगे। यही हमारा फर्ज़ है।" उनकी बातें सुनकर मेरी आंखें नम हो गईं। मैंने पहली बार महसूस किया कि गाँव के लोग कितने सच्चे और ईमानदार होते हैं। फिर मैंने कहा, "बेटी का अंगूठा लगाना होगा।" जैसे ही मैंने उसका हाथ पकड़ा, वह सहम गई। काँपती आवाज़ में बोली, "अम्मा, कोई मेरा हाथ पकड़ रहा है... डर लग रहा है।" माँ ने उसके सिर पर हाथ फेरा और कहा, "बेटा, डर मत! ये बैंक वाले अंकल है। तुम्हारे नाम से खाता खोल रहे हैं। ताकि तुम्हारे पास भी अपना पैसा और अपना खाता हो।" इतना सुनते ही बच्ची ने धीरे-धीरे हाथ आगे बढ़ाया।

मैंने उसके नन्हे-से अंगूठे को स्याही में डुबोकर फॉर्म पर छपवाया। वह छोटा-सा निशान कागज़ पर तो लग गया और मेरे मस्तिष्क पर भी हमेशा के लिए छप गया। फॉर्म पूरा होने के बाद मैंने उन्हें बैठाकर समझाया, "थोड़ा-थोड़ा भी बचाओगे तो आगे चलकर यही बेटी के काम आएगा। पैसा छोटा हो या बड़ा, बचत ज़रूरी है।" माँ ध्यान से सुन रही थी, पिता सिर हिला रहे थे। मैंने उनसे कहा, "अगर मौका मिले तो बेटी को किसी विशेष स्कूल भेजना। ताकि वह थोड़ा पढ़-लिख सके और आत्मनिर्भर बन सके।" पिता ने गहरी साँस ली, "साहब, कोशिश करेंगे। पैसों की कमी है लेकिन भगवान की कृपा से रास्ता बन जाएगा।" मैंने मदद की पेशकश की लेकिन उन्होंने साफ़ मना कर दिया। बोले, "साहब, आज आपने हमारी बेटी का खाता खोल दिया, यही हमारे लिए बहुत बड़ी मदद है।"

शाम को जब मैं बस में बैठकर लौट रहा था, रास्ते में भीड़ थी। लोग हंस रहे थे लेकिन मेरे कानों में बस उसी बच्ची की आवाज़ गूँज रही थी "अम्मा, कोई मेरा हाथ पकड़ रहा है..." अचानक मेरी आंखों से आंसू बह निकले। मैंने खिड़की की ओर मुँह कर लिया ताकि कोई देख न ले। मैं सोच रहा था वो बच्ची कितनी मासूम थी। उसका चेहरा बहुत सुंदर था लेकिन वह खुद अपनी ही सुंदरता को कभी नहीं देख पाएगी। उस पल मैंने भगवान से सवाल किया, "आपने उसे ऐसा क्यों बनाया?" लेकिन अगले पल मैंने विचार किया "भगवान ने शायद उसकी आंखें छीनीं लेकिन उसे ऐसे माँ-बाप दिए जिनका प्यार किसी रोशनी से कम नहीं।" उस एक घटना ने मेरी सोच पूरी तरह बदल दी। मैंने समझा कि बैंकिंग सिर्फ़ पैसों का खेल नहीं है।

जब हम खाता खोलते हैं तो हम किसी के सपनों को जगह देते हैं। जब हम अंगूठा या हस्ताक्षर लेते हैं तो किसी इंसान की पहचान और उम्मीद को मान्यता देते हैं। जब हम पैसे जमा करते हैं तो हम किसी की मेहनत की कमाई को सुरक्षित रखते हैं। उस बच्ची ने मुझे सिखाया कि बैंकिंग का मतलब सिर्फ़ जमा-निकासी या टारगेट पूरा करना नहीं है। उसके बाद से मेरा दृष्टिकोण बदल गया। जब कोई किसान खाता खोलने आता तो मैं उसमें अपने बच्चों का भविष्य संवारने वाले पिता को देखता हूँ। जब कोई बुज़ुर्ग पेंशन लेने आता, तो मैं उसमें पूरी ज़िंदगी मेहनत करने वाले इंसान को देखता हूँ। जब कोई छात्र ऋण लेने आता तो मैं उसमें सपनों से भरा नौजवान देखता हूँ। मैंने सीखा कि हर ग्राहक के पीछे एक कहानी होती है और कभी-कभी वही कहानी हमें जीवनभर का सबक दे देती है।

वह छोटी-सी बच्ची शायद मेरा नाम भी याद न रख पाए लेकिन मेरे लिए वह हमेशा यादगार रहेगी क्योंकि वही वह ग्राहक है जिसने मेरी ज़िंदगी बदल दी। उस दिन मुझे एहसास हुआ कि मैं सिर्फ़ बैंकिंग नहीं कर रहा हूँ बल्कि मैं लोगों के सपनों और उम्मीदों की रक्षा कर रहा हूं। आज भी जब मैं किसी का अंगूठा लगवाता हूँ तो मुझे याद आता है कि हर खाता एक कहानी है और कभी-कभी वह कहानी हमारी ज़िंदगी को हमेशा के लिए बदल देती है।

-अधिकारी
शाखा सोलापुर, महाराष्ट्र

कलाकार

प्रदीप कुमार रॉय

रात के ग्यारह बज रहे थे। फ्लैट के सामने एक गाड़ी के रुकने की आवाज़ आई। खिड़की के शीशे से बाहर नीचे सड़क पर झांककर देखा, पुलिस की पीसीआर वैन खड़ी थी। नीचे ग्राउंड फ्लोर के फ्लैट पर कुछ हलचल-सी सुनाई दी, दरवाज़ा खुला। आवाज़ तेज़ हुई पर उतनी नहीं कि उनकी बातें स्पष्ट समझ में आती, झगड़े जैसा माहौल था। महिला की आवाज़ औरों से कुछ तेज़ थी। पुलिस घर के अंदर गई, कुछ देर तक उनके बीच बातचीत चली। बातचीत से जो कुछ मैं समझ पाती, वह थी बस उस महिला की चीख-चिल्लाहट। महिला का चीखना कुछ कम हुआ, पुलिस चली गई। गली की दरवाजे-खिड़कियां एक-एक कर बंद हुईं। मैं घटना को समझने का जोड़-तोड़ करने लगी। "धड़ाम...!" उनका दरवाजा फिर से खुला, आवाज़ फिर तेज़ हो गई। थोड़ी गुत्थम-गुत्थी के बाद स्कूटर स्टार्ट कर तेजी से वहां से किसी के जाने की आवाज़ आई। जिज्ञासावश मैंने अब खिड़की का किवाड़ धीरे से खोला। "वो चला गया... अब आप भी चले जाइए... मैं यहाँ पड़ी-पड़ी घुटती रहूं... इससे सब कुछ हल हो जाएगा? अच्छा होता हम माँ-बेटी को ज़हर दे देते... और आप दोनों बाप-बेटे अपनी मनमानी करते रहते...।" खुशी की आवाज़ थी। शायद अपने ससुर से बिदक कर गुहार लगा रही थी। दरवाज़ा बंद हो गया। मैं देर रात तक ये अटकलें लगाती रही कि आखिर ऐसी क्या बात हो गई जो पुलिस को आना पड़ गया।

महीना भर हो गया यहाँ हमें आए हुए, यह पहली बार है जब मेरे पति का तबादला किसी शहर में हुआ है। यहाँ अपार्टमेंट में किसी को भी नहीं जानती, सिवाय खुशी के। कभी-कभार वाशिंग मशीन में धुले हुए कपड़ों को छत पर धूप में डालते हुए मिली है। खुशी की दो साल की बेटी, मेरे बेटे के साथ खेलने के लिए ऊपर आ जाती तो उसे ढूंढ़ते हुए भी एकाध बार वह हमारे यहां आई है। उसी दौरान उसके साथ हुई बातचीत से उनके परिवार के बारे में कुछ-कुछ मैं जान पाई पर उससे इस घटना के किसी भी सिरे को जोड़कर कुछ भी अनुमान लगाने में मैं असमर्थ थी। खुशी का पति, किसी नामी-गिरामी नाटक कंपनी में कलाकार है। नायक की भूमिका में उसकी अच्छी-खासी पहचान है। नाटकों का निर्देशन भी देता है। अक्सर अपने काम के सिलसिले में वह गाँव-गाँव, शहर-शहर शो करता फिरता है। महीनों घर नहीं आता। सब कुछ ठीक-ठाक था जब तक कि उसकी माँ जीवित थीं। पत्नी के असमय वियोग से उबरने की क्षमता बटोर पाना उनके पिता यानी भोला बाबू के लिए मुश्किल हो पड़ा। नतीजतन दिन-रात शराब की नशे में वे चूर रहने लगे। परिस्थिति का सामना करने में असमर्थ बेटा भी ज्यादातर बाहर ही अपना समय बीताता। परिवार का संतुलन डांवाडोल हो गया। सगे-संबंधी तथा उनके शुभ चिंतकों ने इनकी समस्या का एक ही हल निकाला और वह था सोमू की शादी।

जैसा अमूमन होता है कि किसी की प्रसिद्धि से जितने उनके मित्र बनते हैं, उतने ही उनके शत्रु भी बन जाते हैं जो अपनी धृष्ट मनोभावना से अपने तथाकथित मित्र की छवि को मलिन करने में सदैव तत्पर रहते हैं। सोमू के साथ भी ऐसा ही हुआ। उसके कुछ सह-कलाकार उसकी तरक्की से ईर्ष्या करते थे। उधर कुछ नए कलाकार जो इनसे गैर-मुमकिन मदद की उम्मीद रखते थे और मदद न मिलने की स्थिति में बैर रखते हुए इनसे प्रतिशोध का मौक़ा ढूंढ़ते। हुआ यूं कि सोमू के विरुद्ध 'कास्टिंग-काउच' जैसे जघन्य अपराध से जोड़कर खुशी के घरवालों में कुप्रचार किए गए ताकि विवाह संपन्न न हो सके। सोमू को भी खुशी के चरित्रहीन होने की

झूठी और मनगढ़ंत बातें बताई गईं, सबूतें पेश की गई। अंततोगत्वा, सारी प्रतिकूल परिस्थितियों के विपरीत दोनों पक्षों ने समुचित सूझ-बूझ का परिचय दिया और विवाह को अंजाम देने में कामयाब हुए।

उनकी शादी को तीन साल हो गए हैं। पता नहीं क्यों मेरे अंदर धीरे-धीरे उसके प्रति अपनत्व का भाव उमड़ने लगा था। माँ-बाप किसी दुर्घटना में सिधार गए तब खुशी छोटी थी। उसे अपने माता-पिता की कोई भी बात याद नहीं है। जब से होश संभाला है अपने ताऊ-ताई को ही माँ-बाप के रूप में पाया है। खुशी के अलावा उनकी अपनी भी दो बेटियां हैं। खुशी है उनमें सबसे छोटी। छुटपन से ही बेटा और बेटी के बीच की असमानता के भाव को वह समझने लगी थी तब उसने ही स्वयं अनुमान लगाया था कि बेटियों में सबसे छोटी होना और वो भी इच्छा के विरुद्ध पैदा हो जाना ही, शायद उसके प्रति ताऊ-ताई, जिसे वह अपना माता-पिता समझती थी, के व्यवहार में आई कटुता का कारण रहा हो। छोटी होने के बावजूद शादी भी उसकी पहले कर दी गई, ताऊ-ताई ने भी खुशी की शादी करवा कर मानो गंगा नहा लिया हो। शादी के बाद बेटी कहाँ है, कैसी है? इस बारे में एक बार भी खबर लेना उचित नहीं समझा। खुशी मुझे यह सब बताते हुए रो पड़ी थी। बिना माँ-बाप के कितनी ही यातनाएं सही होगी उसने अपने छोटे से जीवन काल में। मुझे दरअसल कुछ हमदर्दी-सी हो गई थी खुशी से।

रात की घटना को जानने के लिए मैं सुबह का इंतजार करती रही। करवटें बदलते हुए सोचती रही कि आखिर किस हालत में होगी खुशी। सुबह मैंने जल्दी में अपना काम निपटाया और बेसब्री से उससे मिलने का मौक़ा तलाशने लगी। उसके पति और ससुर की उपस्थिति में मेरा उसके पास यूं जाना उचित भी नहीं होगा। काफी देर इंतजार करने के बाद जब किसी की आहट सुनाई नहीं दी तो मैंने दबे पांव उसके दरवाजे पर दस्तक दी, दरवाज़ा खुला था। मैं खुशी के कमरे में दाखिल हो गई। खुशी औंधे मुंह पलंग पर बेसुध पड़ी थी, कपड़े पसीने से तर थे। शायद सुध-बुध खोकर गर्मी में पंखा चलाने की जरूरत उसे महसूस नहीं हुई, बिटिया भी सो रही थी। मैंने हौले से उसके कंधे को थपथपाया, वह चौंक कर उठ बैठी। बेतरतीब हुए कपड़ों को सहेजते हुए अनायास ही अपनत्व भाव से मुझसे लिपट गई और फफक कर बच्चों की तरह रो पड़ी। मैं सोचने लगी, माँ-बाप ने खुशी नाम दिया था, शायद वह आजीवन खुशहाल रहे। उसकी दयनीय अवस्था देखकर मैंने निश्चय किया कि अगर खुशी के लिए मुझसे कुछ बन पड़ता है तो मैं उसे ज़रूर करूंगी।

उसने बड़े ही भारी मन से रात की घटना को मेरे सामने रखा था.... दो-चार दिनों से वह किसी अज्ञात नंबर के कॉल से परेशान थी। कोई था जो उसके पति का किसी लड़की के साथ नाजायज़ रिश्ते की बात बता रहा था। एक-दो बार तो उसने इन बातों पर कोई तरजीह न देते हुए कॉल को काट दिया था। फिर उसने व्हाट्स-एप पर एक लड़की के साथ उसके पति के अंतरंग फोटो भेजे। वैसे तो खुशी यूनिट के सभी कलाकारों को जानती है और कई बार मिल भी चुकी है पर वह लड़की उनमें से कोई नहीं थी। इन सब को खुशी ने नज़र-अंदाज़ किया, यह जानते हुए कि ऐसी घटनाएं इन कलाकारों के साथ अक्सर होती रहती है। सोमू ने भी शादी के शुरुआती दिनों में इन बातों की जानकारी खुशी को देते हुए आगाह किया था कि इन अफवाहों से वह दूर ही रहे।

मैंने जब कॉलर के किसी भी बात को गंभीरता से नहीं लिया तब उसने कॉल कर हाल की एक घटना का संदर्भ दिया ताकि मुझे विश्वास हो सके। उसने बताया कि सोमू उस लड़की से मिलने कोलकाता गया हुआ है, उसने उसे बीस हज़ार रुपये भी दिए हैं। दरअसल सोमू के कोलकाता जाने की बात सच थी। वह अपनी कंपनी के काम के सिलसिले कोलकाता गया हुआ था, किसी नए नाटक के कस्ट्यूम्स के लिए बीस हज़ार एडवांस देने। वो बीस हज़ार रुपये सोमू ने खुशी से लिए थे। घटनाओं की सामंजस्यता के बावजूद भी उसने इन बातों पर कोई प्रतिक्रिया नहीं जताई। उसे अपने सोमू पर गहन विश्वास था लेकिन अब उस नंबर से धमकी भरे कॉल आने लगे। कॉलर बता रहा था कि वह लड़की उसकी मंगेतर है इसलिए सोमू के साथ उसके मेलजोल को वह हरगिज़ बर्दास्त नहीं करेगा, अगर सोमू नहीं मानेगा तो उसका खून करने से भी वह नहीं हिचकिचाएगा। उसने निश्चय किया कि सोमू के कोलकाता से वापस आते ही सारी घटनाओं से उसे अवगत कराते हुए उसे सतर्क रहने के लिए आगाह करेगी।

सोमू सुबह जब कोलकाता से वापस आया खुशी ने उस 'होक्स कॉलर' की सारी बातें उसे बताई और साथ-साथ जान लेने की धमकी वाली बात भी। सब कुछ सुनने से पहले ही सोमू अचानक खुशी पर भड़क उठा। भला-बुरा कहते हुए दोषारोप किया कि वह उसके चरित्र पर बेवजह संदेह कर रही है। सोमू ने अचानक खुशी

के हाथ से मोबाइल छीन ली और कहा कि यह मोबाइल ही सारे फसाद की जड़ है। लाख अनुनय-विनय के बावजूद भी उसने खुशी को मोबाइल नहीं लौटाया। खुशी उसे दिखाना चाहती थी, उस कॉलर का नंबर जहां से कॉल आया था। खुशी की बातों को अनसुना करते हुए सोमू मोबाइल लेकर घर से जल्दी निकल गया और जब वापस आया तो मोबाइल उसके पास नहीं था। मोबाइल छुपाए जाने की घटना से खुशी के संदेह को बल मिल गया।

मुझे खुशी का संदेह स्वाभाविक लगा। सोमू के आचरण पर प्रश्न-चिह्न लगाना कतई निराधार नहीं लगा। अपने पति के जीवन में किसी पराई औरत को कोई कैसे बर्दाश्त कर सकती थी। खुशी ने जिद की कि सोमू उसे उसका मोबाइल वापस कर दे। सोमू ने उसे मोबाइल वापस नहीं दिया। मोबाइल उसे वापस नहीं मिला और उल्टे सोमू के द्वारा वह तिरस्कृत होने लगी तो आख़िरकार उसने पुलिस को बुला लिया। "इसने मेरा मोबाइल लिया है, वापस नहीं देता !" सोमू की ओर इशारा करते हुए खुशी ने पुलिस से शिकायत की।

"कौन है यह?" पुलिस ने पूछा।
"मेरा पति है, सोमू !"
"यह शिकायत है या पुलिस के साथ मजाक ?"

पुलिस ने पहले तो मामले को ऐसा ही कुछ समझते हुए खुशी को गुस्साई नज़रों से घूरा। फिर खुशी की उम्र का ख्याल करते हुए इसे बचकानी बात बताकर हंसते हुए कहा कि ये आपका आपसी मामला है और आपस में सुलझा लेने की नसीहत देकर पुलिस चली गई। पुलिस के जाने के बाद मोबाइल की मांग की जिद पर खुशी का अड़े रहना सोमू को परेशान कर रहा था। परिस्थिति से विमुख होकर वह स्कूटर से कहीं निकल गया। उसके ससुर भी घर की अशांति से तंग आकर कहीं निकल रहे थे कि तभी खुशी ने आवाज़ लगाईं थी, जिसे कल रात मैंने स्पष्ट सुना था... "वो चला गया... अब आप भी चले जाइए... मैं यहाँ पड़ी-पड़ी घुटती रहूं... इससे सब कुछ हल हो जाएगा? अच्छा होता हम माँ-बेटी को ज़हर दे देते... और आप दोनों बाप-बेटे अपनी मनमानी करते रहते...।"

मैंने उसे समझाया था कि हो सकता है यह किसी की घिनौनी करतूत हो ताकि तुम लोगों में अशांति बनी रहे। मैंने सलाह दी कि किसी भी ठोस कदम उठाने से पहले उसे बड़ी सूझ-बूझ से निर्णय लेना है, अन्यथा परिस्थितियों को बिगड़ते देर नहीं लगती। खुशी को समझाने की प्रक्रिया में मैंने पुलिस को घर पर बुलाने जैसी घटना को गलत बताया और कहा कि इससे समाज में अपनी मर्यादा नष्ट होती है। मोबाइल की बात को भी मैंने मूर्खता से परिपूर्ण तथा बचकाना ठहराया। मर्यादा की बात पर उसने मुझसे प्रश्न किया, "अगर पुलिस से मैं अपने पति के अनैतिक रिश्ते की बात कहती तो क्या परिवार की मर्यादा बनी रहती।" उसने फिर कहा, "पति की मर्यादा का ध्यान रखते हुए ही मैंने पुलिस से उसके नाजायज़ रिश्ते की बात न कह कर सिर्फ इतना कहा कि सोमू उसे उसका मोबाइल नहीं दे रहा है। इसे कोई बचकाना समझता है तो समझे। और हाँ, अगर मैं उस समय पुलिस को नहीं बुलाती तो बाप-बेटे मुझे मारते-पीटते, अत्याचार करते... ससुर जी ने तो मारने के लिए हाथ भी उठा लिया था।" खुशी की सूझबूझ से मैं सचमुच दंग रह गई। अकेली जान वह कर भी क्या सकती थी, इसलिए महज उनमें भय पैदा करने के लिए ही उसने पुलिस का सहारा लिया था।

कहने लगी, जब वह पेट से थी तो उसे मायके भेज दिया गया था। बेसिर-पैर का आरोप लगाया था उस पर। "तब मैं दो महीने के गर्भ से थी। शाम के वक्त बिजली चली गई थी। पूजा में बैठी थी कि अचानक सरसराहट-सी आवाज़ हुई, किसी के कमरे में घुसने जैसी आवाज़। मैंने समझा कि ससुर जी होंगे क्योंकि उनके अलावे घर में कोई नहीं था पर वे दरवाजा खुला छोड़ बाहर सड़क पर चहलकदमी कर रहे थे। मौक़ा देखकर कोई घर के अंदर घुस आया था, मैंने आवाज लगाई पर कोई जवाब नहीं आया। महज मन का वहम मानते हुए मैं अपने काम में लग गई। ससुरजी घर के अंदर दाखिल हुए, उन्हें मेरे बेड-रूम में एक परछाईं सी दिखाई दी। अंदर देखा तो कोई वाश-रूम में छिपा बैठा था। उसे पकड़ कर वे बाहर लाए, एक मजदूर-सरीखा आदमी था। मैंने चीखकर उससे आने का कारण पूछा पर वह चुप रहा, नज़रों को ज़मीन पर गाड़े। मेरे ससुरजी उसे अपने बाएं हाथ से पकड़ कर दाहिने से मोबाइल पर मेरे पति को घटना के बारे में बताने में लगे थे कि मौक़ा पाकर एक झटके से वह भाग निकला। सोमू जब आया तो ससुरजी ने घटना को उनके समक्ष ऐसे रखा जैसे मैंने ही उसे किसी गलत मकसद से बुलाया था। मेरे ही सामने मेरे ताऊ-ताई को मोबाइल पर मेरे दुश्चरित्र होने की मनगढ़ंत बातें बताई। मैं बेगुनाह थी, गलती ससुरजी की थी। अगर वे उस आदमी को घर के अंदर बंदकर लोगों को इकट्ठा कर पूछा होता या पुलिस

के हवाले कर दिया होता तो असलियत का पता लग जाता। उनकी बेवकूफी की सजा मुझे भुगतनी पड़ी। असलियत को जाने बगैर दोनों ने मेरी खूब पिटाई की थी। इतना ही नहीं सुबह होते ही मुझे मायके छोड़ आए।" उसने आगे कहा कि उन दिनों जब तक अपने मायके में रही, बाप-बेटे में से कोई भी नहीं आया था उसे देखने। बेटी के जन्म के बाद ही ये लोग आये थे उसे वापस लेने। माँ-बाप होते तो शायद वापस भेजने को तैयार नहीं होते।

सब कुछ सुनने के बाद मैंने सोमू के बारे में खुशी की इच्छा को टोहना चाहा। उसने कहा कि वह सोमू को बहुत चाहती है और सोमू भी उसे। हाँ, कभी-कभार अपने पिता के कहने पर झूठ-सच जाने बगैर मुझ पर बरस पड़ता है। उनके विरुद्ध 'कास्टिंग काउच' का मामला कोर्ट में विचाराधीन है। ऐसे में सोमू के लिए उसकी परेशानी बढ़ गई है। मेरे समझाने पर वह सब कुछ मानने को तैयार भी हो गई पर मोबाइल छिन जाने की बात से वह कतई खुश नहीं थी। अगर सोमू निर्दोष है तो फिर उसने मोबाइल क्यों छिपाया, खुशी की इस दलील से मैं सहमत थी। उसने कहा, उसे उस मोबाइल की सख्त ज़रूरत है ताकि सबूत के तौर पर सोमू को वह दोषी साबित कर सके, कम-से-कम अपनी नज़रों में ही सही क्योंकि उन लोगों ने उसे अकारण ही दोषी ठहराया था परंतु वह ऐसा नहीं करेगी। उसे वह सबूत के आधार पर सबक सिखाना चाहती है ताकि आइंदा वह सच का सहारा ले, किसी के उल-जलूल आरोपों पर तरजीह न दे, चाहे वह उसके पिता के ही क्यों न हो। सोमू के द्वारा खुशी के उस मोबाइल की मांग को नकारने का मेरे पास भी कोई तर्क नहीं था। मैंने सोचा, अगर खुशी मोबाइल वापस करने की अपनी बात पर अड़ी रहे तो विवाद कभी सुलझेगा ही नहीं क्योंकि सोमू शायद अपनी करतूतों के कारण पकड़े जाने के भय से खुशी को वह मोबाइल वापस देने से रहा। तभी मैंने उसे समझाया कि अभी दो-एक दिनों के लिए वह इसकी मांग न करे, परिस्थिति संभल जाए तो उसे वह मोबाइल मैं खुद दिलवाउंगी, ऐसा भरोसा दिया। वह मान गई।

मैंने अपने मोबाइल से सोमू को कॉल किया। झगड़े को सुलझाने के लिए मेरी पहल को सोमू ने अंततः हरी झंडी दे दी। सोमू से मेरी यह पहली बातचीत थी। सोमू ने हिचकिचाहट के साथ कहना शुरू किया और फिर धीरे-धीरे सब कुछ कह गया। उसने बताया कि किसी के कहने पर खुशी उसे आजकल बेवजह शक करने लगी है। कोई है जो उसे मोबाइल पर मेरी गतिविधियों के बारे में बता रहा है। मैं सच्चाई जानना चाहता हूँ। यह भी जानना चाहता हूँ कि वह कौन है जो खुशी को भ्रमित कर रहा है। खुशी के लिए मुझे चिंता है। कहीं उसकी अल्प-आयु और बुद्धि का कोई गलत फायदा न उठा ले इसीलिए मैंने उससे मोबाइल ले लिया है। मैंने उसकी बातों को गौर से सुना। जवाब मैंने सिर्फ 'हाँ' या 'ना' में ही दिया।

मैंने सोमू को अपने घर आने को कहा। सोमू आया, यद्यपि सोमू की बातों में निहित सच्चाई को पूरी तरह से मैं नकार नहीं सकती थी पर खुशी से हमदर्दी होने के कारण मैं शायद निरपेक्ष नहीं हो पा रही थी जिस कारण उसके दोषी होने का भाव उसके चेहरे पर मुझे नज़र आने लगा। उनमें थोड़ी तकरार हुई लेकिन कुछ कहासुनी के बाद मैंने उन दोनों को आपस में मिलवा दिया। दोनों को मिलते देखकर मैं कुछ आश्वस्त हुई लेकिन मुझे भय हो आया कि सोमू जब खुशी को मोबाइल वापस करेगा तो अवश्य ही उन फोटों को सबूत के तौर पर दिखाकर खुशी, सोमू से जवाब मांगेगी।

कुछेक दिनों बाद डरते हुए मैंने खुशी से उस मोबाइल के बारे में पूछा तो उसने बड़ी उत्सुकता से बताया कि दरअसल मोबाइल में कुछ था ही नहीं, न किसी अज्ञात नंबर से कोई कॉल और न ही व्हाट्स-एप पर कोई फोटो। मैं तो सोमू को उसकी बिगड़ी संगति से निकालना चाहती थी। अगर मोबाइल सोमू खोल लेता तो मेरा बना बनाया नाटक सब बिगड़ जाता, इसलिए मोबाइल उसके हाथ नहीं देना चाहती थी। फिर, मेरे लिए शर्मिंदगी महसूस करते हुए उसने मुझसे कहा कि मुझे अकारण ही उसके इस प्रक्रिया में उलझना पड़ा, जिस कारण वह लज्जित है और क्षमा चाहती है। आगे उसने मुझसे विनती की कि सोमू को असलियत का पता नहीं चलना चाहिए क्योंकि उसने उसे बताया है कि अपने मोबाइल को उसने फॉर्मेट कर दिया है ताकि बिना किसी शक-ओ-शुबहा वे एक नए सिरे से ज़िन्दगी को शुरू कर सकें। सोमू ने भी चुपचाप मेरी बात मान ली है। सभी की नज़रों में नाबालिग-सी लगने वाली तथा बचकाना हरकत करने वाली उस लड़की की इस पहल से आकृष्ट होकर मैं जीवन के सच्चे नाटक के उस मंजे हुए कलाकार को विस्मित होकर निहारती रह गई।

-सेवानिवृत्त मुख्य प्रबंधक
पंजाब एण्ड सिंध बैंक

राजभाषा उपलब्धियां

31 अक्तूबर, 2025 को संपन्न नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (बैंक), कोलकाता की छमाही बैठक में यूको बैंक के प्रबंध निदेशक एवं मुख्य कार्यपालक अधिकारी श्री अश्वनी प्रसाद के कर कमलों से बैंक के आंचलिक कार्यालय कोलकाता में पदस्थ राजभाषा अधिकारी श्री रवि यादव को पुरस्कृत प्रदान किया गया। यह पुरस्कार, यूको बैंक द्वारा आयोजित राजभाषा संबंधी प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता में प्रथम स्थान अर्जित करने के फलस्वरूप दिया गया। इस अवसर पर भारतीय रिजर्व बैंक, कोलकाता के क्षेत्रीय निदेशक श्री सुधांशु प्रसाद तथा यूको बैंक के कार्यपालक निदेशक श्री राजेन्द्र कुमार साबू भी मंच पर उपस्थित रहे।

बैंक ऑफ़ बड़ौदा द्वारा "ग्रीन डिपॉजिट और ग्रीन फायनांस" विषय पर आयोजित अखिल भारतीय सेमिनार में प्रस्तुति के लिए बैंक की प्रबंधक सुश्री स्नेहा जायसवाल के लेख का चयन किया गया। उक्त सेमिनार में उन्हें बैंक ऑफ़ बड़ौदा के कार्यपालक द्वारा स्मृति-चिह्न प्रदान भी किया गया।

राजभाषा उपलब्धियां

वर्ष 2024-25 के दौरान उत्कृष्ट राजभाषा कार्यान्वयन के लिए बैंक की शाखा अजरौंदा को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (बैंक व बीमा कंपनियाँ), फरीदाबाद से शाखा कार्यालय श्रेणी में प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ। 18 दिसंबर, 2025 को आयोजित नराकास की 21वीं छमाही बैठक में नराकास अध्यक्ष के कर कमलों से शाखा प्रबंधक श्रीमती सुमन शर्मा तथा राजभाषा अधिकारी श्री अनिल शुक्ला ने उक्त पुरस्कार ग्रहण किया।

बैंक के आंचलिक कार्यालय होशियारपुर को नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति होशियारपुर द्वारा आयोजित वार्षिक राजभाषा शील्ड प्रतियोगिता 2023-24 में द्वितीय पुरस्कार प्रदान किया गया। यह पुरस्कार, 28 अक्तूबर, 2025 को आयोजित नराकास की छमाही बैठक में माननीय अध्यक्ष महोदय के कर कमलों से मुख्य प्रबंधक श्री संजय कुमार शर्मा तथा राजभाषा अधिकारी श्री मिठू साव ने प्राप्त किया।

बैंक परिसर में अग्नि रोकथाम

चन्द्र किशोर पाल

बैंक शाखाएं और कार्यालय आज पूर्णतः आधुनिक विद्युत आधारित कार्य-प्रणाली पर निर्भर हैं। कंप्यूटर, सर्वर, एटीएम, यूपीएस, एयर कंडीशनर, प्रिंटर, स्कैनर, सीसीटीवी, नेटवर्किंग उपकरण तथा अन्य इलेक्ट्रॉनिक प्रणालियां निरंतर विद्युत आपूर्ति पर संचालित होती हैं। इसके अतिरिक्त, बैंक परिसरों में नकदी, महत्त्वपूर्ण वित्तीय दस्तावेज, गोपनीय रिकॉर्ड तथा आम जनता की नियमित उपस्थिति रहती है। ऐसी स्थिति में किसी भी प्रकार की अग्नि दुर्घटना न केवल भारी वित्तीय क्षति पहुंचा सकती है बल्कि कर्मचारियों और ग्राहकों के जीवन के लिए भी गंभीर ख़तरा उत्पन्न कर सकती है। आग लगने जैसी घटनाएं नकारात्मक प्रचार-प्रसार को आमंत्रित करती है और बड़े स्तर पर संस्था की छवि धूमिल करती हैं। इसे किसी भी संस्था के हित में नही माना जाता है। आंकड़ों के अनुसार कार्यालयों एवं वाणिज्यिक परिसरों में होने वाली अधिकांश अग्नि घटनाओं का प्रमुख कारण विद्युत शॉर्ट सर्किट, ओवर-लोडिंग, खराब वायरिंग, ढीले कनेक्शन या उपकरणों का अत्यधिक गर्म होना होता है इसलिए बैंक शाखाओं एवं कार्यालयों में विद्युत अग्नि सुरक्षा को सर्वोच्च प्राथमिकता देना आवश्यक है।

आग लगने की संभावना एक ऐसा खतरा है जिसका सामना हम सभी को कभी न कभी करना पड़ता है। विभिन्न इमारतों में लगी आग के विस्तृत विश्लेषण से यह तथ्य सामने आया है कि ज्यादातर आग किसी की लापरवाही या अनदेखी के कारण लगती है। यदि आग बुझाने या उस पर काबू पाने के लिए समय रहते कदम उठाए जाएं तो नुकसान को काफी हद तक कम किया जा सकता है। अग्नि सुरक्षा उपाय करने की आवश्यकता तभी सूचीबद्ध होगी जब हम यह कल्पना करने की कोशिश करेंगे कि अगर किसी शाखा/कार्यालय में आग लग जाए तो क्या हो सकता है। संपत्ति और मूल्यवान रिकॉर्ड नष्ट हो सकते हैं और मानव जीवन समाप्त हो सकते हैं। रिकॉर्ड का पुनर्निर्माण किया जा सकता है, संपत्ति को फिर से बनाया जा सकता है लेकिन मानव जीवन का कोई प्रतिस्थापन नहीं है।

बैंक परिसरों में सामान्यतः विद्युत-सम्बंधी अग्नि जोखिम पाए जाते हैं। एक ही सॉकेट में अनेक विद्युत उपकरण जोड़ देना अथवा घटिया गुणवत्ता के एक्सटेंशन बोर्ड का प्रयोग करना, ओवरलोडिंग का प्रमुख कारण बनता है। पुराने या क्षतिग्रस्त विद्युत तार भी अग्नि जोखिम का कारण बन सकते हैं। समय के साथ विद्युत तारों का इंसुलेशन कमजोर हो जाता है। चूहों द्वारा कुतरे जाने, नमी, अत्यधिक तापमान या यांत्रिक क्षति के कारण तार खराब हो सकते हैं जिससे शॉर्ट सर्किट और आग का ख़तरा उत्पन्न होता है। ढीले प्लग, सॉकेट, स्विच या पैनल कनेक्शन से चिंगारी (स्पार्किंग) उत्पन्न होती है। यह चिंगारी पास की ज्वलनशील सामग्री को आग पकड़ने के लिए पर्याप्त हो सकती है। सर्वर, यूपीएस, फोटो-कॉपी मशीन, प्रिंटर, एटीएम एवं एयर कंडीशनर जैसे उपकरण लंबे समय तक लगातार चलने पर अधिक गर्म हो सकते हैं विशेषकर जब वेंटिलेशन अपर्याप्त हो। बिना अनुमति किए गए वायरिंग परिवर्तन, अस्थायी जोड़ (जुगाड़ कनेक्शन), गैर-मानक उपकरणों का उपयोग एवं अप्रशिक्षित व्यक्तियों द्वारा किए गए विद्युत कार्य अग्नि जोखिम को कई गुना बढ़ा देते हैं।

विद्युत अग्नि सुरक्षा हेतु निवारक उपाय : आग को रोकने का सबसे अच्छा तरीका आग के संभावित कारणों को खत्म करना है। सभी विद्युत इंस्टॉलेशन राष्ट्रीय एवं स्थानीय सुरक्षा मानकों के अनुरूप होने चाहिए। केवल लाइसेंस प्राप्त एवं प्रमाणित इलेक्ट्रिशियन से

ही विद्युत कार्य कराए जाएं। अस्थायी वायरिंग, खुले तार और गैर-मानक फिटिंग पर पूर्ण प्रतिबंध हो। विद्युत ले-आउट ड्राइंग, लोड चार्ट एवं सिंगल लाइन डायग्राम अद्यतन रखे जाएं। भवन के उच्चतम बिंदु पर लाइटनिंग कंडक्टर स्थापित किया जाना चाहिए और समय-समय पर उसकी जांच की जानी चाहिए। सर्वर, यूपीएस, एटीएम, फोटो कॉपी मशीन और एयर कंडीशनर के लिए समर्पित विद्युत सर्किट उपलब्ध हों। एक्सटेंशन कॉर्ड का उपयोग न्यूनतम रखा जाए और केवल प्रमाणित गुणवत्ता वाले उत्पादों का ही प्रयोग हो। नियमित निरीक्षण एवं निवारक रखरखाव भी आग लगने की संभावना को न्यून करती है। इसमें अंतर्गत विद्युत पैनल, एमसीबी, ईएलसीबी, केबल, सॉकेट एवं प्लग की नियमित जांच, वर्ष में कम से कम एक बार थर्मल स्कैनिंग एवं अर्थिंग प्रतिरोध परीक्षण इत्यादि शामिल है। कार्यालय में केवल आईएसआई/ सीई प्रमाणित विद्युत उपकरणों का ही प्रयोग किया जाए।

यूपीएस एवं सर्वर कक्ष का सुरक्षित प्रबंधन इस दृष्टि से महत्वपूर्ण है। यूपीएस एवं सर्वर कक्ष में पर्याप्त वेंटिलेशन एवं तापमान नियंत्रण की व्यवस्था हो। इन कक्षों में कागज, फर्नीचर या अन्य ज्वलनशील सामग्री न रखें। कार्यालय बंद होने के बाद सभी गैर-आवश्यक विद्युत उपकरण बंद किए जाए। कंप्यूटर, प्रिंटर, स्कैनर, हीटर, माइक्रोवेव आदि को अनप्लग किया जाए। बैंक परिसर में स्मोक डिटेक्टर, हीट डिटेक्टर एवं फायर अलार्म सिस्टम स्थापित हों। विद्युत पैनल एवं सर्वर कक्ष के पास कार्बन डाय-ऑक्साइट अथवा क्लीन एजेंट अग्निशामक यंत्र उपलब्ध हों।

आपदा प्रबंधन के अंतर्गत कार्मिकों को समुचित प्रशिक्षण देना तथा समय-समय पर जागरूकता शिविर का आयोजन किया जाना चाहिए। इस क्रम में कर्मचारियों को विद्युत जोखिमों की पहचान का प्रशिक्षण, अग्निशामक यंत्रों के सही उपयोग का व्यावहारिक प्रशिक्षण और नियमित रूप से फायर ड्रिल एवं मॉक ड्रिल आयोजित किया जाए। आपात स्थिति में संपर्क हेतु ज़िम्मेदार अधिकारियों की सूची प्रदर्शित हो। विद्युत आग लगने की स्थिति में सर्वप्रथम मुख्य विद्युत स्विच / एमसीबी / ईएलसीबी बंद करें। यदि संभव हो तो केवल प्रभावित क्षेत्र / तल (फ्लोर) की बिजली पहले काटें। पानी का प्रयोग बिल्कुल न करें क्योंकि विद्युत आग पर पानी डालने से घातक करंट लगने की संभावना होती है। विद्युत आग बुझाने हेतु केवल कार्बन डाइ-ऑक्साइड अग्निशामकों, क्लीन एजेंट/ मॉड्यूलर स्वचालित अग्निशामक प्रणाली का उपयोग करें। एबीसी/ ड्राई केमिकल पाउडर (डीसीपी) अग्निशामक का उपयोग तभी करें जब बिजली की आपूर्ति पूरी तरह बंद हो। लोगों को आपातकालीन निकास मार्ग से बाहर निकालें तथा अग्निशमन विभाग को सूचना दें।

बैंक शाखाओं एवं कार्यालय परिसरों में विद्युत अग्नि रोकथाम तकनीकी या नियामकीय आवश्यकता मात्र नहीं है बल्कि यह मानव जीवन की सुरक्षा, बैंक की परिसंपत्तियों के संरक्षण तथा संस्थागत संचालन की निरंतरता से प्रत्यक्ष रूप से जुड़ा एक अत्यंत महत्त्वपूर्ण दायित्व है। विद्युत आग की घटनाएं न केवल भौतिक क्षति का कारण बनती हैं बल्कि बैंकिंग सेवाओं में बाधा, डेटा हानि, वित्तीय नुक़सान एवं प्रतिष्ठात्मक जोखिम भी उत्पन्न कर सकती हैं। सुदृढ़ एवं मानक अनुरूप विद्युत अवसंरचना, विद्युत उपकरणों का नियमित निरीक्षण एवं रखरखाव, अनुमोदित एवं प्रमाणित अग्निशमन उपकरणों की उपलब्धता तथा स्वचालित फायर डिटेक्शन एवं अलार्म प्रणालियों की स्थापना से विद्युत आग के जोखिम को काफ़ी हद तक कम किया जा सकता है। इसके अतिरिक्त बैटरी कक्ष, एटीएम कैबिनेट, सर्वर कक्ष एवं विद्युत पैनल जैसे संवेदनशील क्षेत्रों में मॉड्यूलर स्वचालित अग्निशामक प्रणालियों का प्रावधान जोखिम न्यूनीकरण की दिशा में एक प्रभावी क़दम है।

समान रूप से महत्त्वपूर्ण है कि बैंक के सभी अधिकारी एवं कर्मचारी विद्युत सुरक्षा मानकों, आपातकालीन प्रतिक्रिया प्रक्रियाओं एवं सुरक्षित निकासी योजनाओं से भली-भांति परिचित हों। नियमित अग्नि सुरक्षा प्रशिक्षण एवं मॉक ड्रिल कर्मचारियों की तत्परता बढ़ाने के साथ-साथ वास्तविक आपातकाल की स्थिति में घबराहट को कम करने में सहायक सिद्ध होती हैं। अतः यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि यदि बैंक प्रबंधन और कर्मचारी संयुक्त रूप से विद्युत सुरक्षा नियमों का कड़ाई से अनुपालन, समयबद्ध ऑडिट, त्वरित घटना रिपोर्टिंग एवं सुधारात्मक निवारक उपाय सुनिश्चित करें तो बैंकिंग परिचालन को सुरक्षित, विश्वसनीय, निर्बाध एवं आपदा-सहिष्णु बनाया जा सकता है जिससे ग्राहकों, कर्मचारियों एवं संस्थान तीनों के हितों की प्रभावी रूप से सुरक्षा संभव हो सकेगी।

-प्रबंधक (अग्नि सुरक्षा)
प्रधान कार्यालय सुरक्षा विभाग

भारतीय अर्थव्यवस्था पर भारतीय भाषाओं का प्रभाव

- वैश्विक परिदृश्य के संदर्भ में

मनप्रीत कौर

वैश्वीकरण, तकनीकी उन्नति और डिजिटल क्रांति के दौर में भाषा और अर्थव्यवस्था के मध्य प्रत्यक्ष संबंध स्थापित हो गया है और यह संबंध अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भी समान रूप से प्रासंगिक है। 21वीं सदी वैश्वीकरण, डिजिटल क्रांति और बहुभाषिक संवाद का युग है। विश्व लगातार बदल रहा है- तकनीकी नवाचार, सामाजिक संरचनाओं में परिवर्तन और वैश्विक आर्थिक समीकरणों के बदलाव के साथ बदलते विश्व परिदृश्य में भारतीय अर्थव्यवस्था भी तीव्र गति से विकसित हो रही है। इस विकास यात्रा में भाषा का महत्वपूर्ण स्थान है, विशेषतः हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएं जो भारत की सांस्कृतिक और सामाजिक पहचान की आधारशिला हैं। वैश्वीकरण, डिजिटल क्रांति और बहुध्रुवीय विश्व व्यवस्था के दौर में भाषा आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण साधन बन चुकी है। भारत जैसे बहुभाषी देश में हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाएं यथा तमिल, बंगाली, मराठी, तेलुगु, गुजराती, कन्नड़ आदि भारतीय अर्थव्यवस्था को आकार देने में निरंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही हैं। भारत, विश्व का पाँचवां सबसे बड़ा अर्थव्यवस्था बन चुका है। कृषि, उद्योग, सेवा क्षेत्र और अब डिजिटल इकोनॉमी सभी क्षेत्रों में निरंतर प्रगति हो रही है। स्टार्टअप्स, ई-कॉमर्स, आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस और फिनटेक जैसे क्षेत्रों में भारत ने वैश्विक स्तर पर पहचान बनाई है। आज का विश्व तीव्र गति से निरंतर परिवर्तन की ओर जा रहा है। तकनीकी नवाचार, वैश्विक व्यापार के विस्तार और सांस्कृतिक आदान-प्रदान की निरंतर प्रक्रिया ने अर्थव्यवस्थाओं को एक-दूसरे से जोड़ दिया है। भारत जैसे भाषाई विविधता से समृद्ध देश में हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएं आर्थिक विकास की नई दिशा निर्धारित कर रही हैं।

भारत में लगभग 22 अनुसूचित भाषाएं और सैकड़ों बोलियां प्रचलन में हैं। यह भाषाई विविधता न केवल सांस्कृतिक संपदा है बल्कि एक आर्थिक अवसर भी है। भाषाओं के माध्यम से उपभोक्ता तक सहजता से पहुंचना, उत्पादों का स्थानीयकरण और सेवाओं की पहुंच को व्यापक बनाना संभव होता है। बहुराष्ट्रीय कंपनियां अब यह समझने लगी हैं कि किसी भी देश के उपभोक्ताओं तक पहुंचने के लिए उनकी भाषा में संवाद करना अनिवार्य है। उदाहरण के लिए ग्रामीण इलाकों में डिजिटल सेवाओं जैसे यूपीआई, डिजिटल बैंकिंग या ई-कॉमर्स के प्रसार में स्थानीय भाषाओं ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। जब नागरिकों को अपनी भाषा में सेवाएं उपलब्ध होती हैं तो वे उन्हें अधिक सहजता से अपनाते हैं और उसका अच्छे से लाभ उठाते है। हिंदी, जो भारत की सर्वाधिक बोली जाने वाली भाषा है, ने घरेलू बाजार के विस्तार में निर्णायक योगदान दिया है। भारत में हिंदी एवं भारतीय भाषाओं में विज्ञापन, मनोरंजन, उत्पाद विवरण, ग्राहक सेवा और डिजिटल इंटरफेस उपलब्ध कराने से उपभोक्ता

विश्वास बढ़ा है। इससे घरेलू खपत में वृद्धि हुई है जो भारतीय अर्थव्यवस्था की एक प्रमुख शक्ति है। शिक्षा और ऑनलाइन सेवाओं के क्षेत्र में हिंदी सामग्री की मांग ने नई आर्थिक संभावनाएं पैदा की हैं। अर्थव्यवस्था के क्षेत्र में भाषाओं की भूमिका व उनके प्रभाव को निम्नांकित बिंदुओं के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है :

- **डिजिटल युग में भारतीय भाषाएं -** 21वीं सदी में इंटरनेट और सोशल मीडिया ने भाषा की सीमाओं को नए सिरे से परिभाषित किया है। डिजिटल इंडिया अभियान, सस्ते स्मार्टफोन और इंटरनेट की उपलब्धता ने भारत में डिजिटल अर्थव्यवस्था को नई ऊंचाइयों तक पहुंचाया है। आज इंटरनेट उपयोगकर्ताओं का एक बड़ा हिस्सा ग्रामीण और अर्ध-शहरी क्षेत्रों से आता है जहाँ अंग्रेज़ी की बजाय हिंदी और क्षेत्रीय भाषाओं का प्रयोग अधिक होता है। पहले जो सामग्री अंग्रेज़ी में केंद्रित थी, आज वह हिंदी और अन्य भारतीय भाषाओं में तेजी से उपलब्ध हो रही है। गूगल, मेटा और अमेज़न जैसी वैश्विक कंपनियां भारतीय भाषाओं में अपने प्लेटफॉर्म को अनुकूल बना रही हैं जिससे भारत के ग्रामीण और अर्ध-शहरी उपभोक्ताओं का बड़ा बाजार खुला है। ई-कॉमर्स, फिनटेक, एडटेक, हेल्थटेक, एग्रीटेक और सरकारी पोर्टल्स जब भारतीय भाषाओं में उपलब्ध होते हैं तो डिजिटल सेवाओं का दायरा व्यापक होता है। इससे न केवल उपभोक्ताओं की संख्या बढ़ती है बल्कि डिजिटल साक्षरता, ऑनलाइन लेन-देन और पारदर्शिता को भी बढ़ावा मिलता है। भारतीय भाषाओं में बढ़ती डिजिटल सामग्री से अनेक तकनीकी स्टार्टअप और कंटेंट क्रिएटर्स को आर्थिक सशक्तिकरण मिला है। यूट्यूब, इंस्टाग्राम और अन्य प्लेटफार्मों पर क्षेत्रीय भाषाओं में कंटेंट बनाने वाले लोगों ने न केवल आय के नए स्रोत विकसित किए हैं बल्कि देश की सांस्कृतिक पुनर्स्थापना में भी योगदान दिया है।

- **शिक्षा, कौशल और रोजगार में भाषा -** किसी भी देश की अर्थव्यवस्था उसकी मानव संसाधन पर निर्भर करती है। मातृभाषा या भारतीय भाषाओं में शिक्षा से छात्रों की समझ, रचनात्मकता और विश्लेषण क्षमता बेहतर होती है। भारतीय अर्थव्यवस्था का एक बड़ा हिस्सा युवाओं की शक्ति पर निर्भर है।

यदि शिक्षा और कौशल प्रशिक्षण को स्थानीय भाषाओं में सुलभ बनाया जाए तो बड़े पैमाने पर उत्पादकता में वृद्धि हो सकती है। नई राष्ट्रीय शिक्षा नीति (2020) ने इसी दिशा में कदम बढ़ाते हुए मातृभाषा में शिक्षा को प्रोत्साहित किया है। इससे न केवल शिक्षा की गुणवत्ता में सुधार हुआ है बल्कि ग्रामीण इलाकों में रोजगार संभावनाएं भी बढ़ी हैं। तकनीकी शिक्षा, व्यावसायिक प्रशिक्षण और कौशल विकास जब स्थानीय भाषाओं में उपलब्ध होते हैं तो अधिक युवा रोजगार योग्य बनते हैं। इससे आर्थिक विकास को दीर्घकालीन आधार मिलता है। भाषाई दक्षता और तकनीकी कौशल का संयोजन आधुनिक उद्योगों के लिए आवश्यक हो गया है। उदाहरणस्वरूप, बीपीओ और कस्टमर सर्विस सेक्टर में हिंदी और अन्य क्षेत्रीय भाषाओं का ज्ञान रखने वाले युवाओं की मांग लगातार बढ़ रही है। इससे घरेलू रोजगार सृजन के साथ-साथ निर्यात सेवाओं में भी वृद्धि हुई है।

- **व्यापार, विपणन और उपभोक्ता व्यवहार -** भारत में उपभोक्ताओं का बड़ा वर्ग क्षेत्रीय पहचान और भाषा से गहराई से जुड़ा रहता है। मार्केटिंग और विज्ञापन जगत ने यह भली-भांति समझ लिया है कि भारतीय बाजार में सफलता पाने के लिए स्थानीय भाषाओं में भावनात्मक जुड़ाव आवश्यक है। हिंदी और भारतीय भाषाओं में बने विज्ञापन ग्रामीण बाजारों में अधिक प्रभावशाली सिद्ध हुए हैं। ई-कॉमर्स प्लेटफॉर्म जैसे फ्लिपकार्ट, मिंत्रा और अमेज़न इंडिया ने कई भारतीय भाषाओं में इंटरफेस प्रदान कर उपभोक्ता आधार को विस्तारित किया है। इस रणनीति से न केवल बिक्री बढ़ी है बल्कि उपभोक्ताओं का डिजिटल अर्थव्यवस्था पर विश्वास भी मजबूत हुआ है।

- **ग्रामीण अर्थव्यवस्था और भाषाई समावेश** - भारत की बड़ी आबादी आज भी कृषि और ग्रामीण अर्थव्यवस्था पर निर्भर है। भारत की लगभग 65% आबादी ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। यदि कृषि से जुड़ी जानकारी जैसे मौसम, बीज, उर्वरक, फसल बीमा, बाजार मूल्य और सरकारी योजनाएं इत्यादि जब हिंदी एवं क्षेत्रीय भाषाओं में उपलब्ध होती हैं तो किसानों की निर्णय क्षमता बढ़ती है। इससे कृषि उत्पादकता में सुधार होता है और ग्रामीण अर्थव्यवस्था सशक्त होती है। फलतः समग्र भारतीय अर्थव्यवस्था को इससे मजबूती प्राप्त होती है। इसलिए इन इलाकों में विकास योजनाओं, बैंकिंग सेवाओं और सरकारी नीतियों के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए स्थानीय भाषाओं में संवाद अनिवार्य है। सरकार ने डिजिटलीकरण अभियानों में भारतीय भाषाओं को प्राथमिकता देकर ग्रामीण अर्थव्यवस्था को सक्रिय बनाया है। प्रधानमंत्री मुद्रा योजना, आत्मनिर्भर भारत अभियान और डिजिटल साक्षरता मिशन जैसे कार्यक्रम तब अधिक सफल हुए जब उनके संदेश स्थानीय भाषाओं में लोगों तक पहुंचे। इस प्रकार भाषा केवल माध्यम नहीं रही बल्कि विकास का वाहक भी बन गई हैं।

- **सांस्कृतिक और रचनात्मक उद्योगों में भाषा का योगदान–** चलचित्र, संगीत, टीवी और ऑनलाइन मनोरंजन उद्योग भारतीय अर्थव्यवस्था के सबसे गतिशील क्षेत्रों में से एक हैं। हिंदी फिल्म उद्योग अर्थात बॉलीवुड के साथ-साथ तमिल, तेलुगू, मराठी, बंगाली और पंजाबी फिल्म उद्योग भी तेजी से बढ़ रहे हैं। इन उद्योगों ने न केवल लाखों रोजगार अवसर पैदा किए हैं बल्कि भारत के निर्यात में भी अपना योगदान दिया है। भारतीय भाषाओं में निर्मित कंटेंट की वैश्विक मांग बढ़ रही है जिससे विदेशी मुद्रा अर्जन, रोजगार सृजन और भारत की सांस्कृतिक सॉफ्ट पावर में वृद्धि हो रही है। यह रचनात्मक अर्थव्यवस्था भारतीय जीडीपी में भी योगदान दे रही है। ओटीटी प्लेटफॉर्म्स ने भाषायी विविधता को वैश्विक स्तर पर पहुंचाया है। विभिन्न भारतीय भाषाओं के सीरीज़ और फिल्में विश्वभर में देखी जा रही हैं जिससे सांस्कृतिक राजस्व में बढ़ोत्तरी हुई है और भारतीय भाषाओं की वैश्विक पहचान मजबूत हुई है।

- **चुनौतियां और सुधार की दिशा** - हालांकि, भाषा आधारित विकास के इस मार्ग में कुछ चुनौतियां भी हैं। तकनीकी अनुवाद की गुणवत्ता, मशीन लर्निंग में स्थानीय भाषाओं के लिए पर्याप्त डेटा की कमी और भाषाई असमानता प्रमुख समस्याएं हैं। कई बार नीतिगत और प्रशासनिक स्तर पर अंग्रेज़ी को प्राथमिकता मिलने से भारतीय भाषाएं तकनीकी क्षेत्रों में पीछे रह जाती हैं। इन चुनौतियों से सामना करने के लिए आवश्यक है कि सरकार, निजी क्षेत्र और शैक्षणिक संस्थान मिलकर भारतीय भाषाओं में नवाचार को प्रोत्साहित करें। भाषा-तकनीकी अनुसंधान, अनुवाद उपकरणों का विकास और स्टार्टअप्स को सहयोग देकर भाषाई बाधाओं को दूर किया जा सकता है।

बदलते विश्व परिदृश्य में हिंदी एवं भारतीय भाषाएं भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए केवल सांस्कृतिक धरोहर नहीं, बल्कि आर्थिक विकास की आधारशिला हैं। हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएं न केवल संप्रेषण के माध्यम हैं बल्कि उद्योग, व्यापार, शिक्षा और तकनीक के विस्तार का आधार भी हैं। ये भाषाएं आर्थिक गतिविधियों को जनसाधारण से जोड़कर समावेशी विकास को संभव बनाती हैं। यदि भारत अपनी भाषाई विविधता को आर्थिक संपदा के रूप में इस्तेमाल करता है तो यह "वसुधैव कुटुंबकम" की भावना को आर्थिक रूप से भी साकार करेगा। इसलिए, भविष्य का भारत एक ऐसा होगा जहां हिंदी और अन्य भारतीय भाषाएं न केवल संस्कृति की पहचान होंगी, बल्कि समृद्ध और आत्मनिर्भर अर्थव्यवस्था की प्रेरक शक्ति भी पहचान होगी। डिजिटल अर्थव्यवस्था, वित्तीय समावेशन, स्थानीय उद्यमिता, शिक्षा, कृषि, रचनात्मक उद्योग और वैश्विक सॉफ्ट पावर—सभी क्षेत्रों में भारतीय भाषाएं भारतीय अर्थव्यवस्था को सशक्त बना रही हैं। यह कहा जा सकता है कि हिंदी एवं भारतीय भाषाओं का सशक्तिकरण, भारतीय अर्थव्यवस्था के सशक्तिकरण का ही पर्याय है। यदि आने वाले समय में भारत को एक आत्मनिर्भर, समावेशी और वैश्विक आर्थिक शक्ति बनना है तो भारतीय भाषाओं को विकास की मुख्य धारा में स्थान देना अनिवार्य होगा।

-अधिकारी
स्टाफ प्रशिक्षण केंद्र, रोहिणी, दिल्ली

आलेख एवं साक्ष्य उप समिति का चेन्नई दौरा

शाखा कांचीपुरम

शाखा पुदुचेरी

अक्तूबर, 2025 माह में संसदीय राजभाषा समिति की आलेख एवं साक्ष्य उप समिति द्वारा चेन्नई, पुदुचेरी तथा आसपास स्थित अन्य नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति व उनके सदस्य कार्यालयों का राजभाषा संबंधी निरीक्षण किया गया। इसी क्रम में नराकास पुदुचेरी के अंतर्गत हमारी पुदुचेरी शाखा तथा नराकास कांचीपुरम के अंतर्गत हमारी कांचीपुरम शाखा का भी 29 अक्तूबर, 2025 को राजभाषा संबंधी निरीक्षण संपन्न हुआ। उक्त अवसर पर शाखा प्रबंधक पुदुचेरी श्री प्रवीण पी और शाखा प्रबंधक कांचीपुरम श्री प्रतीप एम तथा आंचलिक कार्यालय चेन्नई में पदस्थ वरिष्ठ प्रबंधक (राजभाषा) सुश्री मनीषा खटीक ने माननीय समिति सदस्यों से शिष्टाचार मुलाकात की।

ੴ ਸ੍ਰੀ ਵਾਹਿਗੁਰੂ ਜੀ ਕੀ ਫ਼ਤਹਿ

पंजाब एण्ड सिंध बैंक

(भारत सरकार का उपक्रम)

जहाँ सेवा ही जीवन - ध्येय है

पीएसबी परिवार
पारिवारिक बैंकिंग बचत उत्पाद

- अधिकतम 6 पारिवारिक बचत खातों को लिंक करें
- न्यूनतम औसत शेष अनुरक्षण में लचीलापन*
- निःशुल्क प्रीमियम डेबिट कार्ड
- शून्य एनईएफटी/ आरटीजीएस/ आईएमपीएस/ एसएमएस प्रभार
- लॉकर किराए में रियायत*

खातों को जोड़ें
स्मार्ट बचत करें
साथ-साथ बढ़ें

*नियम व शर्तें लागू

टोल-फ्री नंबर

1800 419 8300

हमें फॉलो करें @PSBIndOfficial